जगजीवन साहेब की
शब्दावली
[दूसरा भाग]

जिस में

उन महात्मा के अति उत्तम शब्द ३० बिरह और प्रेम अंग के, ६३ उपदेश के, २४ भेद के, १७ साध महिमा और असाध की रहनी के, ८ आरती के, ६ मंगल के, ३ सावन व हिंडोला के, ७ बसंत के, २९ होली के, और १८० मिश्रित अंग के छपे हैं, और शिष्यों के नाम ५ शिक्षा-पत्र और कुछ साखियाँ भी दी हुई हैं।

इलाहाबाद
बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग वर्क्स में प्रकाशित हुई।
सन् १९११

सफ़हा १४२] [दाम ॥-)

Printed at the Belvedere Steam Printing Works, Allahabad, by E. Hall

निवेदन

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जक्त-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी व उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। अब तक जितनी बानियाँ हम ने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और कोई २ जो छपी थीं तो ऐसे छिन्न भिन्न, बेजोड़ या अशुद्ध रूप में कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हम ने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ ऐसे हस्त-लिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकर शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये हैं और यह कार्रवाई बराबर जारी है। भर सक तो पूरे ग्रंथ मँगा कर छापे जाते हैं और फुटकर शब्दों की हालत में सर्व साधारन के उपकारक पद चुन लिये जाते हैं। कोई पुस्तक बिना कई लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी जाती, ऐसा नहीं होता कि औरों के छापे हुए ग्रंथों की भाँति बेसमझे और बेजाँचे छाप दी जाय। लिपि के शोधने में प्रायः उन्हीं ग्रंथकार महात्मा के पंथ के जानकार अनुयायी से सहायता ली जाती है और शब्दों के चुनने में यह भी ध्यान रक्खा जाता है कि वह सर्व साधारन की रुचि के अनुसार और ऐसे मनोहर और हृदय-बेधक हों जिन से आँख हटाने का जी न चाहे और अंतःकरन शुद्ध हो।

कई बरस से यह पुस्तक-माला छप रही है और जो जो कसरें जान पड़ती हैं वह आगे के लिये दूर की जाती हैं। कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत नोट में दे दिये जाते हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा जाता है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के संक्षेप वृत्तांत और कौतुक फुट-नोट में लिख दिये जाते हैं।

सूचीपत्र शब्दों का

अ

आ

उ

ए

ऐ

औ

क

ख

ग

च

ज

सूचीपत्र

द

न

प

ब

भ

म

य

*यह शब्द भूल से पृष्ठ ८८ पर फिर छप गया है।

ह

ज्ञ

*यह शब्द भूल से पृष्ठ २६ पर फिर छप गया है।

जगजीवन साहब की बानी

दूसरा भाग

बिरह और प्रेम का अंग।

॥ शब्द १ ॥

पैयाँ पकरि मैं लेउँ मनाय ॥टेक॥
कहौं कि तुम्ह हीं कहँ मैं जानौं, अब तुम्हरी सरनहिं आय १
जोगी प्रीत न तोरी कबहूँ, यह छबि सुरति बिसरि नहिं जाय२
निरखत रहौं निहारत निसु दिन, नैन दरस रस पियौं अघाय३
जगजीवन के समरथ तुमहीं, तजि सतसंग अनत नहिं जाय४

॥ शब्द २ ॥

उनहीं सौं कहियो मोरी जाय ॥टेक॥
ए सखि पैयाँ परि मैं बिनवौं, काहे हमैं डारिन बिसराय ॥१॥
मैं का करौं मोर बस नाहीं, दीन्ह्यो अहै मोहिं भटकाय ॥२॥
ए सखि साँईं मोहिं मिलावहु, देखि दरस मोर नैन जुड़ाय।३
जगजीवन मन मगन होउँ मैं, (रहौं) चरन कमल लपटाय।४

॥ शब्द ३ ॥

पिय तें भेंट करावहु री, मैं जाउँ बलिहारी ॥टेक॥
पैयाँ परि मैं बिनवौं तुम्ह तें, मैं तौ अहौं अनारी।
पाँचु साँचु की गैल न आवहिं, इन्ह सब काम बिगारी ॥१॥

चलहिँ पचीस कुमारग निसु दिन, नाहीं जात सँभारी ।
मैं तैं मान गुमान न छोड़हिँ, करि उपाय मैं हारी ॥२॥
तीनि त्यागि लै चलु चौथे कहँ, तब देखौं अनुहारी* ।
जगजीवन सखि हिलि मिलि करि कै, सीस चरन पर वारी ३

॥ शब्द ४ ॥

झमकि चढ़ि जाउँ अटरिया री ॥टेक॥
ए सखि पूँछौं साँई केहिँ अनुहरिया* री ॥१॥
सो मैं चहौं रहौं तेहिँ संगहिँ, निरखि जाउँ बलिहरिया री।२।
निरखत रहौं पलक नहिँ लाऔं, सूतौं सत्त सेजरिया† री ३
रहौं तेहिँ सँग रँग रस मातो, डारौं सकल बिसरिया री ४
जगजीवन सखि पायन परि कै, माँगि लेउँ तिन सनिया‡ री ५

॥ शब्द ५ ॥

अरी मोरे नैन भये बैरागी ॥टेक॥
भसम चढ़ाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, सबै अभूषन त्यागी ।
तलफि तलफि मैं तन मन जार्यौं, उनहिँ दरद नहिँ लागी १
निसु बासर मोहिँ नींद हरी है, रहत एक टक लागी ।
प्रीत सोँ नैनन नीर बहतु है, पीपी पीवन जागी ॥२॥
सेज आय समुझाय बुझावहु, लेउँ दरस छबि माँगी ।
जगजीवन सखि तृप्त भये हैं, चरन कमल रस पागी ॥३॥

॥ शब्द ६ ॥

पैयाँ परि मैं हारिउँ हो, तुम्ह दरद न आनी ॥१॥
निगुनी अहौं बुद्धि की हीनी, गति तुम्हरी नहिँ जानी ॥२॥
लागी रहन सुरति मन मोरे, भरमत फिरौं भुलानी ॥३॥

*रूप । †पलँग । ‡स्नेह ।

जब छूटत तब मन मोर टूटत, समुझि समुझि पछितानो ॥४॥
काह कहौं कहि आवत नाहीं, जेहि हिय सुरति समानो ॥५॥
जो जानै सोई पै जानै, को करि सकै बखानो ॥६॥
जगजीवन कर जोरि कहत है, देहु दरस बरदानो ॥७॥

॥ शब्द ७ ॥

मैं निगुनो बन भूलि परिउँ, गुन एकौ नाहीं रे ॥टेक॥
मैं सोवत सखि चौंकि परिउँ, पिय पिय रट लागी रे।
भेंट बिना तन मन तलफै, मैं करम अभागी रे ॥१॥
जस जल बिना मीन तलफत है, अस मैं तलफि सुखानो रे।
अस मोरे सुधि सूरति आवत, लागत धूप पुहुप कुम्हिलानो रे २
भा तन खाक नहीं किछु भावे, हू जोगिनि बौरानी रे।
समुझावै को केहि का केहि बिधि, जेहिं लागी सोइ जानो रे ३
मुनि जन जती भूले यहि बन महँ, पियैं बिषय कै पानी रे।
सो अँदेस होत मन मोरे, कब धौं मिलिहौ आनो रे ॥४॥
मैं तैं पाँच पचीस डोरि लै, चढ़ि ठहरानी रे।
जगजीवन निर्गुन निर्मल तकि, भयुँ मस्तानी रे ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

मैं तन मन तुम्ह पर वारा ॥टेक॥
निस दिन लागि चरन की छहियाँ, सूनी सेज निहारा ॥१॥
तुम्हरे दरस काँ भइ बैरागिन, माँगौं सरन करारा ॥२॥
डोरी पोढ़ि बिलग ना कबहूँ, निरखि कै रूप निहारा ॥३॥
जगजीवन के सतगुरु साँईं, तुमहीं पार उतारा ॥४॥

॥ शब्द ९ ॥

जोगिनि भइउँ अँग भसम चढ़ाय ।
कब मोरा जियरा जुड़इही आय ॥१॥
अस मन ललकै मिलौं मैं धाय ।
घर आँगन मोहिं कछु न सुहाय ॥२॥
अस मैं ब्याकुल भइउँ अधिकाय ।
जैसे नीर बिन मीन सुखाय ॥३॥
आपन केहि तें कहौं सुनाय ।
जो समझौं तो समुझि न आय ॥४॥
सँभरि सँभरि दुख आवै रोय ।
कस पापी कहँ दरसन होय ॥५॥
तन मन सुखित भयो मोर आय ।
जब इन नैनन दरसन पाय ॥६॥
जगजीवन चरनन लपटाय ।
रहै संग अब छूटि न जाय ॥७॥

॥ शब्द १० ॥

जोगिया भँगिया खवाइल, बौरानी फिरौं दिवानी ॥ टेक ॥
ऐसे जोगिया कि बलि बलि जैहौं, जिन्ह मोहिं दरस दिखाइल ॥१
नहिं कर तें नहिं मुखहिं पियावै, नैनन सुरति मिलाइल ॥२॥
काह कहौं कहि आवत नाहीं, जिन्ह के भाग तिन्ह पाइल ॥३॥
जगजिवनदास निरखि छबि देखै, जोगिया मुरति मन भाइल ॥४

॥ शब्द ११ ॥

साँईं समरथ कृपा तुम्हारी ।
बालमीक अजामिल गनिका, लिह्यो छिनहिं माँ तारी ॥१॥

मैं बपुरा अजान का जानौं, का करि सकौं बिचारी ।
बहा जात अपंथ के मारग, तुम जानेहु हितकारी ॥२॥
नेग जनम जग धस्यो आनि कै, कबहुँ न सुद्धि सँभारी ।
अब डरपौं भौजाल देखि कै, लीजै अब की तारी ॥३॥
बरनत सेस सहस मुख ब्रह्मा, संकर लाये तारी ।
माया बिदित ब्यापि रहि सब महँ, निर्मल जोति तुम्हारी ॥४॥
अपरम्पार पार को पावै, कहि कथि सब कोउ हारी ।
जहँ जस बास पास करि जानी, तहँ तेइ सुरति सुधारी ॥५॥
अनगन पतित तारि एक छिन में, गनि नहिं जात पुकारी ।
जगजिवनदास निरखि छबि देख्यो, सीस चरन पर वारी ॥६॥

॥ शब्द १२ ॥

अब की बार तारु मोरे प्यारे । बिनती करि कै कहौं पुकारे१॥
नहिं बसि अहै केतो कहि हारे । तुम्हरे अब सब बनहि सँवारे२
तुम्हरे हाथ अहै अब सोई । और दूसरो नाहीं कोई ॥ ३ ॥
जो तुम चहत करत सो होई । जल थल महँ रहि जोति समोई ॥ ४ ॥
काहुक देत हो मंत्र सिखाई । सो भजि अंतर भक्ति दृढ़ाई ५
कहौं तो कछू कहा नहिं जाई । तुम जानत तुम देत जनाई ६
जगत भगत केते तुम तारा । मैं अजान केतान बिचारा ७
चरन सीस मैं नाहीं टारौं । निर्मल मुरत निर्बान निहारौं ८
जगजीवन काँ अब बिस्वास । राखहु सतगुरु अपने पास ॥९॥

॥ शब्द १३ ॥

हरि छबिहिं दिखाय, मोर मन हरि लियो ॥ टेक ॥
सुमिरन भजन करत निसुबासर, सोई जुग जुग जियो ॥१॥
काह कहौं कहि आवत नाहीं, नयन दरस रस पियो ॥२॥
ज्ञान ध्यान जानत तुमहीं कहँ, जन आपन करि लियो ॥३॥
जगजीवन स्वामी दास तुम्हारा, सीस चरन महँ दियो ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

साहेब समरत्थ प्रीति तुम्ह तें लागी ॥ टेक ॥
नेग जनम करम फंद पर्‍यो नाहिं जागी ॥१॥
अपथ पंथ तत्त जानि भूलेहुँ अभागी ॥२॥
तेहिं पर्‍यो सुधि बुद्धि हर्‍यो कौनि जुगत त्यागी ॥३॥
जगजिवनदास करै बिनती चरन सरन लागी ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

अब मोरि मान ले इतनी ॥टेक॥
तुम बिनु ब्याकुल भरमत डोलत, अब तो आनि बनी ॥१॥
मैं तो दास तुम्हार कहावत, साहेब तुमहिं धनी ॥२॥
तुम तौ सत्तगुरू हौ हमरे, अल्लह अलख गनी ॥३॥
जगजीवन चरनन महँ लागो, नैन सोँ सुरति तनी ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

ए सखि अब मैं काह करौं।
भूलि परिउँ मैं आइ कै नगरी, केहि बिधि धीर धरौं ॥१॥
अंत नहीं यहि नगर क पावौं, केसो बिचार करौं।
चहत जो अहौं मिलौं मैं पिय कहँ, भ्रम की गैल परौं ॥२॥

हित मोरे पाँच होत अनहितई, बहुतक खैंच करौं ।
के तो प्रबोधि कै बोध करौं मैं, ई कहै धरौं धरौं ॥३॥
तीस पचीस सहेली मिलि सँग, ई गहै कैसे ब्ररौं ।
पाँय पकरि कै बिनती करौं मैं, लै चलु गगन परौं ॥४॥
निरत निरखि छबि मोहिं कहो अब, गहि रहु नाहिं टरौं।
जगजीवन सत दरस करौं सखि, काहे क भटक फिरौं ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

तुम तें बिनय सुनावौं, मोहिं तें भेंट करावहु ।
सूरति उन कै कैानो बिधि कै, सो कहि मोहि बतावहु ॥१॥
दरसन बिन ब्याकुल मैं डोलौं, नैना मोर जुड़ावहु ।
सूरति तुम तजि देहु सयानप*, सहजहिं प्रीति लगावहु ॥२॥
चलहु गगन चढ़ि संग हमारे, तब वह दरसन पावहु ।
बैठ अहैं पिउ वहि चौमहले, तहँ सत सेज बिछावहु ॥३॥
रहो सँग सूति एकहो मिलिकै, कबहूँ नहिं दुख पावहु ।
जगजीवन सखि निरखि रूप छबि, सूरत सुरत मिलावहु ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

यहि नगरी महँ परिउँ भुलाई ।
का तकसीर भई धौं मोहिं तें, डारे मोर पिय सुधि बिसराई १
अब तो चेत भयो मोहिं सजनी, ढुँढ़त फिरहुँ मैं गइउँ हिराई।
भसम लाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, अब उन बिनु मोहिं कछु न सुहाई ॥२॥
पाँच पचीस कि कानि मोहिं है, तातें रहौं मैं लाज लजाई ।
सुरति सयानप अहै यहै मत, सब इक बसि करि मिलि रहु जाई३

*स्यानपन, चालाकी ।

निरति रूप निरखि कै आवहु, हम तुम तहाँ रहहिं ठहराई ।
जगजीवन सखि गगन मँदिर महँ, मत की सेज सूति सुख पाई ४

॥ शब्द १९ ॥

तुम सोँ नैना लागे मोरे ॥टेक॥
मैं बौरी दरसन बिनु डोलौं, अब पायौं बैठी रहौं नियरे ।
तुम बिनु दुखित सुखित मैं नाहीं, कहत हौं पैयाँ पकरि के टेरे १
दासी जनम जनम की तुम्हरी, भूलिउं आवत जावत फेरे ।
जगजीवन को सुरति तुम्हारी, लागी रहै सदा मन मेरे ॥२॥

॥ शब्द २० ॥

साँई तुम सौं लागो मन मोर ॥१॥
मैं तौ भ्रमत फिरौं निसु बासर, चितवौ तनिक कृपा करि कोर।२
नहिं बिसरावहु नहिं तुम बिसरहु, अब चित राखहु चरनन ठौर३
गुन औगुन मन आनहु नाहीं, मैं तौ आदि अंत को तोर ४
जगजीवन बिनती करि माँगै, देहु भक्ति बर जानि कै थोर५

॥ शब्द २१ ॥

तुम तें का कहि बिनय सुनावौं ।
बारंबारहि मोहिं नचायो, केहि बिधि ध्यान लगावौं ॥१॥
महा अपरबल माया आहै, अंत खोज नहिं पावौं ।
तेहि सुख परि सुधि भूलिगै मोरी, जानि बूझि बिसरावौं २
मोहिं पर पाँच पियादे गालिब, इन्ह तें कल नहिं पावौं ।
जो मैं चहौं कि रहौं हजूरिहिं, इन्ह तें रहै न पावौं ॥३॥
झगरहिं नितहिं पचीस जोगिनी, केहि बिधि राह लगावौं ।
आपनि आपनि करैं तरंगैं, मैं कछु करै न पावौं ॥४॥
कुमति बहावहु सुमति देहु सुभ, सूरति छबिहिं मिलावौं ।
जगजीवन पर करु किरपा अब, कबहुँ नहीं बिसरावौं ॥५॥

॥ शब्द २२ ॥

मेरो अब मन तुम तें लागा ॥टेक॥
सोवत रहिउँ अचेत सुद्धि नहिं, गुरु सत मत तें जागा।
आयो निर्गुन तें बिलगाइ कै, पहिस्यो नीर क पागा* ॥१॥
जोरि जोरि रचि करि कै लीन्ह्यो, जहँ तहँ लाग्यो धागा।
भयो करम बस स्वाद बाद महँ, भरमत फिरौं अभागा ॥२॥
होइ सचेत करि हेत कृपा भै, पहिरि निरभौ कै आँगा† ।
जगजीवन के साँई समरथ, रहौं रंग रस पागा‡ ॥३॥

॥ शब्द २३ ॥

अरी मैं तो नाम के रँग छकी ॥टेक॥
जब तें चाख्यो बिमल प्रेम रस, तब तें कछु न सोहाई।
रैनि दिना धुनि लागि रही, कोउ केतौ कहै समुझाई ॥१॥
नाम पियाला घोँटि कै, कछु और न मोहिं चढ़ी।
जब डोरी लागी नाम की, तब केहि कै कानि रही ॥२॥
जो यहि रँग मैं मस्त रहत है, तेहि कै सुधि हरना।
गगन मँदिल दृढ़ डोरि लगावहु, जाइ रहौ सरना ॥३॥
निर्भय ह्वै कै बैठि रहौ अब, माँगौ यह बर सोई।
जगजीवन बिनती यह मोरी, फिरि आवन नहिं होई ॥४॥

॥ शब्द २४ ॥

नइहरवाँ आय सुधि बिसरी, सुधि बिसरी मोरी सुरति हरी १
का नइहरवाँ फिरहु भुलानि, जैहौ ससुरवा परि है जानि २
काह कहौं कहि नाहीं जाइ, मोहिं बपुरी की सुद्धि न आइ ३
जोगिनि भइ अँग भसम चढ़ाइ, बिनु पिया भेँट रहा नहिं जाइ ४

*पगड़ी। †अँगरखा। ‡पगा हुआ।

ए सखि सूरति देहु बताइ, देखि दरस मोर हियरा जुड़ाइ ॥५॥
जगजीवन कहै गुरु उपदेस, चरन कमल चित देहु नरेस ।६॥

॥ शब्द २५ ॥

मोहिं करैं दुत्ता* लोग, महल में कौन चलै ॥टेक॥
छोड़ि दे बहियाँ मोरी, मोरि मति भइ भोरी† ॥१॥
कुमति मोरि यह माई, जिन्ह डाख्यो सबै नसाई ।२॥
यइ पाँचो मोरे भाई, इ तौ रोकत आहैं आई ॥३॥
करैं पचीस बहु रंगा, इन्ह मिलि मति मोरी भंगा ॥४॥
यइ सब लेउँ लेवाई, तब चढ़ौं अटरिया धाई ॥५॥
इन्ह सब काँ समुझावौं, तब अपने पियहिं रिझावौं ॥६॥
सेज सूति सुख पावौं, तब नैनन सुरति मिलावौं ॥७॥
ए सखि ऐसि बिचारी, तौ होउँ मैं पिय की प्यारी ॥८॥
जगजीवन सत माती, तब जुग जुग सखि अहिवाती‡ ॥९॥

॥ शब्द २६ ॥

मैं तोहिं चीन्हा, अब तौ सीस चरन तर दीन्हा ॥टेक॥
तनिक झलक छबि दरस देखाय ।
तब तें तन मन कछु न सोहाय ॥१॥
काह कहौं कहि नाहीं जाय ।
अब मोहि काँ सुधि समुझि न आय ॥२॥
होइ जोगिन अँग भस्म चढ़ाय ।
भँवर गुफा तुम रहेउ छिपाय ॥३॥
जगजीवन छबि बरनि न जाय ।
नैनन मूरति रही समाय ॥४॥

*दुत्कार । †भूली हुई, बावली । ‡सोहागिन ।

॥ शब्द २७ ॥

रहिउँ मैं निरमल दृष्टि निहारी ॥टेक॥
ए सखि मोहिं तैं कहिय न आवै, कस कस करहुं पुकारी ॥१॥
रूप अनूप कहाँ लगि बरनौं, डारौं सब कछु वारी ॥२॥
रबि ससि गन तेहिं छबि सम नाहीं, जिन केहु गहा बिचारी॥३॥
जगजीवन गहि सतगुरु चरना, दीजै सबै बिसारी ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

प्रभु जी मैं तौ आहुँ तुम्हारा ।
पूजा अरचा नाहीं जानौं, जानौं नाम पियारा ॥१॥
सो हित सदा होत नहिं अनहित, आस किहे संसारा ।
कहत हौं दीन लीन रहौं तुम तें, तुम ब्रत राखनहारा ॥२॥
अंतरध्यानं गगन मगन ह्वै, निरखौं रूप तिहारा ।
पुहुप गूँधि कै माला लैकै, सो पहिरावौं हारा ॥३॥
पान चून औ खैर सुपारी, गरी जायफल दोहरा ।
कपूर इलायची मेरै* खवावौं, पूजा इहै हमारा ॥४॥
कटहर कोवा मेवा ल्यावौं, सोऊ पवावौं प्यारा ।
कनक नीर कर तें मुख धोवौं, तकि के चरन पछारा† ॥५॥
सो चरनामृत नित्त पियो है, सुभ भा जनम हमारा ।
जगजीवन कहँ दिहे रहहु यह, दाता होहु हमारा ॥६॥

॥ शब्द २९ ॥

सखी री करौं मैं कौन उपाई ।
मैं तो ब्याकुल निस दिन डोलौं, उनहिं दरद नहिं आई ॥१॥
काह जानि कै सुधि बिसराई, कछु गति जानि न जाई ।
मैं तो दासी कलपौं पिय बिनु, घर आँगन न सुहाई ॥२॥

---

*मिला कर । †धोया ।

तलफि तलफि जल बिना मीन ज्यौं, अस दुख मोहिं अधिकाई।
निर्गुन नाह* बाँह गहि सेजिया, सूतहि हियरा जुड़ाई ॥३॥
बिन सँग सूते सुख नहिं कबहूँ, जैसे फूल कुम्हिलाई।
ह्वै जोगिन मैं भस्म लगायौं, रहिउँ नयन टक लाई ॥४॥
पैयाँ परौं मैं निरति निरखि कै, महिं का देहु मिलाई।
सुरति सुमति करि मिलहिं एक ह्वै, गगन मँदिल चलि जाई॥५॥
रहि यहि महल टहल महँ लागी, सत की सेज बिछाई।
हम तुम उनके सूत रहहिं सँग, मिटै सबै दुचिताई ॥६॥
जगजीवन सिव ब्रह्मा बिस्नू, मन नहिं रहि ठहराई।
रबि ससि करि कुरबान ताहि छबि, पीवो दरस अघाई ॥७॥

॥ शब्द ३० ॥

पिय को देहु मिलाय, सखी मैं पइयाँ लागौं ॥टेक॥
रैनि दिना मोहिं नींद न आवै, घर आँगन न सोहाय।
मैं बौरी बपुरी ब्याकुल हौं, उन्हैं दरद ना आय ॥१॥
कौन गुनाह भयो धौं महिं तें, डारिन्ह सुधि बिसराय।
बहुत दिनन तें बिछुरे महिं तें, कहँ धौं रहे छिपाय ॥२॥
तलफत मीन बिना जल के ज्यौं, अस मोर जिया अकुलाय।
भसम लगाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, अंत न उनका पाय ॥३॥
सूरति कानि छाँड़ि दइ इत उत, देहौं भेंट कराय।
निरति निरखि जौन छबि आइहु, रूप सो देहुँ बताय ॥४॥
कौनी भाँति अहै केहि मंदिल, भेंट करन तहँ जाय।
सत सेजासन बैठि चौमहले, रबि ससि छबि छाँव जाय ॥५॥
ब्रह्मा बिस्नु सिव का मन तहवाँ, दिष्टि सो कहा न जाय।
जगजीवन सखि हिलिमिलि हम तुम, रहि चरनन लिपटाय॥६॥

---

*पति।

उपदेश का अंग ।

॥ शब्द १ ॥

मन रहु आसन मारि महाँ तैं न डोलहु रे ।
राते माते रहहु प्रगट नहिं खोलहु रे ॥१॥
निरखत परखत रहहु बहुत नहिं बोलहु रे ।
रजनी किवाड़ दीन्ह सत कुंजी तैं खोलहु रे ॥२॥
गुरु के चरन दै सीस आस सब त्यागहु रे ।
जहाँ जहाँ तुम रहहु इहै बर माँगहु रे ॥३॥
चौक बनी चौगान चकमकी विराजै रे ।
रबि ससि छबि तेहिं वारि हंस तेहिं गाजै रे ॥४॥
ब्रह्मा बिस्नु सिव मन निर्गुन अस्थूला रे ।
तेहि हिलि मिलि परसंग फिरहु नहिं भूला रे ॥५॥
चमकत निर्मल रूप झलक बिनु हीरा रे ।
जगजीवन रहु मगन बैठु तेहिं तीरा रे ॥६॥

॥ शब्द २ ॥

साधो भक्ति नहीं औसान* ।
कहन सुनन को बहुत है, हिये ज्ञान नाहिं समान ॥१॥
सरत नहिं कछु करत औरै, पढ़त बेद पुरान ।
और को समुझाइ सिखवत, आपु फिरत भुलान ॥२॥
करत पूजा तिलक दैकै, प्रात करि अस्नान ।
भ्रमत है मन हाथ नाहीं, नाहिं थिर ठहरान ॥३॥

*आसान, सहज ।

तीर्थ ब्रत तप करहिँ बहु बिधि, होम जग जप दान ।
याहि माँ पचि रहत निसि दिन, धर्‍यो नाहीं ध्यान ॥४॥
सीस केस बढ़ाइ रज* अँग लाइ, भे निर्बान ।
अंत तत्वं नाहिँ अजपा, भ्रमत फिरे निदान ॥५॥
परिहरि माला फूल इत उत, बाद जहँ तहँ ठानि ।
नर्क प्रापत भये तेहू, बृथा जनम सिरान ॥६॥
सहज जग रहि सुरति अंतर, भजन सो परमान ।
जगजीवन ते अमर प्रानी, तेहिँ समान न आन ॥७॥

॥ शब्द ३ ॥

साधो मंत्र सत मत ज्ञान ।
देखि जड़ बहुतेर अंधे, झूठ करहिँ बखान ॥१॥
जपहिँ नावँ तपहिँ मैं तैं, किहे गर्ब गुमान ।
नाहिँ थिर मन चलत जहँ तहँ, अचल नाहिं ठहरान ॥२॥
करहिँ बातैं बहुत बिधि तैं, आपु अहहिँ हेवान ।
गयो अजपा भूलि भूले, गयो बिसरि तेवान† ॥३॥
डोरि दृढ़ करि लाउ पोढ़ी, सत्त नामहिँ जान ।
जगजीवन गुरु सत्त समरथ, निरखि तकि निरबान ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

मन गुरु चरन धरि रहु ध्यान ॥टेक॥
अमर अहै अडोल अचलं मानि ले परमान ॥१॥
लाइ संकर रहे तारी कहत बेद पुरान ॥२॥
तत्त सारं इहै आहै अवर नाहीं जान ॥३॥
निराकारं निराधारं निर्गुनं निर्बान ॥४॥
जगजीवन तूँ निरखि सूरति चरन रहु लपटान ॥५॥

---

*भभूत । †सोच बिचार ।

॥ शब्द ५ ॥

ए मन निरखि ले ठहराइ ।
ऐसि सूरति अहै मूरति, अजब दिप्ति सोहाइ ॥१॥
रहा बैठा त्यागि ऐंठा, अनत नहिं बहि जाइ ।
गहौ सतमत जानि ऐसे, नाहिं संकर पाइ ॥२॥
संत मुनि जन रहत जागे, बेद भाषत गाइ ।
नाहिं उत्तम और आहै, लखा जिन का आइ ॥३॥
देखि के जे मस्त भे हैं, मिटी सब दुचिताइ ।
जगजिवन सतगुरु पास बैठे, कबहुं नहिं बिलगाइ ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

साधो देखो मनहिं बिचारी ।
अपने भजन तंत सों रहिये, राखो डोरि सँभारी ॥१॥
भेद न कहिये गुप्तहिं रहिये, कठिन अहै संसारी ।
सुमति सुमारग खोजहिं नाहीं, तैसे नर तस नारी ॥२॥
साध की निंदा करत न डरपत, कुटिलाई अधिकारी ।
ताहि पाप तें नर्क परहिंगे, भुगतहिंगे जुग चारी ॥३॥
करहिं बिबाद सब्द नहिं मानहिं, मन फूलहिं अधिकारी ।
बड़े भाग यहि जग माँ आये, डारिन्ह जन्म बिगारी ॥४॥
सत मत पाय केहू जन बिरले, सूरति राखै न्यारी ।
जगजीवन के सतगुरु समरथ, संकट मेटि उबारी ॥५॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो जग परखा मन जानी ।
संत काँ मिलत कपट मन राखत, बोलत अमृत बानी ॥१॥

कहत हैं और करत हैं औरै, कीन्हे बहुत सयानी ।
सुपने सुमति न कबहूँ आवै, नरक परैं ते प्रानी ॥२॥
बहु बकवाद झूँठ कहि भाखैं, सरस* आपु कहँ जानी ।
अह निरास कीच के कीरा, मरिगे कीच सुखानी ॥३॥
आवत देखि दृष्टि मोहिं ऐसे, ज्ञान कहत हौं छानी ।
बिरले संत तत† तैं लागे, प्रीति नाम तैं ठानी ॥४॥
रहहिं निरंतर अंतर सुमिरहिं, धन्य अहैं ते प्रानी ।
जगजीवन न्यारे सबहीं तैं, सुरति चरन ठहरानी ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

साधो अस्तुति जन जग लूटा ।
गुप्त रहै छिपि मगन मनहिं माँ, भजन कै होइ न टूटा॥१॥
खैंचत सत सीढ़ी के नीचे, गुरु सनमुख तैं हूठा ।
आय परे मन मोह सहर माँ, बाँधे भ्रम के खूँटा ॥२॥
पूजत जक्त भक्त कहि तिन काँ, ध्यान चरन तैं छूटा ।
सुमति भे छीन नहीं लय लागत, कुमति ज्ञान धरि कूटा ॥३॥
होइ निर्बान निंदा तैं साधू अघ क्रम जरि भे भूटा ।
निंदक कर निरबाह नहीं है, जम दूतन धरि कूटा ॥४॥
करिकै जुक्ति जक्त करु बासा, ज्यों मक तागा ऊटा ।
जगजीवन रस चाखि नैन तें, ज्यौं मधु माखी घूटा ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

साधो मैं प्रभु तैं लव लाई ।
जानौं नाहिं अजान अहौं मैं, उनहीं राह बताई ॥१॥

*बड़ा, उत्तम । †तत्व बस्तु ।

कोइ निंदा कोइ अस्तुति करई, कोई करै दिनताई ।
जो जैसी करि मन महँ जानै, तेहि तस प्रगटहि जाई ॥२॥
कोइ करै कूर पूर नहिँ भाखै, रामहिँ नाहिँ डेराई ।
मैं तौ आहौँ राम भरोसे, ताहो को प्रभुताई ॥३॥
होइहि सोई टरै काँ नाहीं, ब्रह्मा बचन सुनाई ।
साधन की जे निंदा करिहैं, परहिँ नरक ते जाई ॥४॥
नैन देखि के सरवन सुनि कै, कहत अहौँ गोहराई ।
जगजिवनदास सब्द कहि साँच, छोड़ देहु गफिलाई ॥४॥

॥ शब्द १० ॥

साधो केहि बिधि ध्यान लगावै ।
जो मन चहै कि रहौँ छिपाना, छिपा रहे नहिँ पावै ॥१॥
प्रगट भये दुनिया सब धावत, साँचा भाव न आवै ।
करि चतुराई बहु बिधि मन तेँ, उलटे कहि समुझावै ॥२॥
भेष जगत दृष्टी तेँ देखत, औरै रचि के गावै ।
चाहत नहीं लहत नहिँ नामहिँ, तृस्ना बहुत बढ़ावै ॥३॥
गहि मन मंत्र रहै अंतर महँ, नाहीं कहि गोहरावै ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, चरनन सीस नवावै ॥५॥

॥ शब्द ११ ॥

अब मन मंत्र साँचा सोइ ।
भाग बड़ हैँ ताहि के, जेहिँ नाम अंतर होइ ॥१॥
प्रगट कहि के नाहिँ भाषै, गुप्त राखै सोइ ।
जागि पागि के सिद्ध होवै, प्रगट तबहीं होइ ॥२॥
जिकर लाये सिखर चढ़िगे, गह्यो चरनन टोइ ।
नेग जनम के करम अघ जे, गये पल मैँ धोइ ॥३॥

देखि सूरति निरखि गुरु कै, रह्यो नाहिं समोइ ।
जगजीवन परकास निर्मल, नाहिँ न्यारा होइ ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

अपने देखि रहु मन जानि ।
तत्त सार दुइ अहैँ अच्छर, मन प्रतीति करि आनि ॥१॥
परगट कहौँ कहा नहिं मानै, है बिबाद की खानि ।
सूकर स्वान बिबादक* निन्दक, जानहिँ लाभ न हानि ॥२॥
मारग असुभ चलहिँ निसि बासर, कबहुँ न आनहिँ कानि ।
सो देखा परगट अस नैनन, लियो अहै पहिचानि ॥३॥
अहौँ भरोसे सदा नाम के, लियो तत्तहिँ छानि ।
जगजिवन सतगुरु नैन निकटहिँ, चरन गहि लिपटान ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

साधो सुमिरौ नाम रसाला ।
बकबादी बाबादी निन्दक, तेहिँ का मुँह करु काला ॥१॥
अन्तर डोरि पोढ़ि कै लावहु, सुमति का पहिरहु माला ।
सतगुरु चरन सीस लै लावहु, वै करि हैँ प्रतिपाला ॥२॥
दुनिया अजब धंध माँ लागी, देखहु प्रगट खियाला ।
नहिँ बिस्वास मनहिँ माँ आवत, पड़े भरम के जाला ॥३॥
मन तेँ न्यारे सदा बसत रहो, यहि संतन कै हाला ।
जगजीवन वह जोति है निर्मल, निरखि के होहु निहाला ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

ए मन मंत्र लीजै छानि ।
लेहु अजपा लाइ अंतर, और बिरथा जानि ॥१॥

*बिबादी, कटहुज्जती ।

धाव नाहीं कहूँ इत उत, अहै बिष कै खानि ।
ताहि नर बस होहुगे जब, होइ सन मत हानि ॥२॥
आइ केते जगत मैं यहि, मरिगे खाक उड़ानि ।
बृथा सर्बस जानि कै, भजि लेहु करि पहिचानि ॥३॥
मारि मैं तैं दोन ह्वै कै, सुमति मन महँ आनि ।
जगजीवन बिस्वास गहिये, निरखि छबि निर्बानि ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो चढ़त चढ़त चढ़ि जाई ।
रसना रटना रहै लगाये, देह सकल बिसराई ॥१॥
अजपा जपन रहै निसि बासर, कबहुँ छूटि नहिं जाई ।
छकित भये रस पाय मस्त ह्वै, मन की तलफ बुझाई ॥२॥
निरखत रहै अलख नहँ मूरति, निर्मल दिप्ति तहँ छाई ।
दुइ कर चरन मांस रहै लाये, रूप तकै निरताई* ॥३॥
जो जानै जस मानै तैसै, कहै कवन गोहराई ।
जगजीवन सतगुरु किरपा तब आवतही लौ लाई ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

मनुआँ बैठि रहहु चौगाना ।
इत उत देखि तमासा आवहु, कहूँ बिलँब नहिं आना ॥१॥
लैकै पाँच करहु इक साँचे, लै पचीस संग ताना ।
मैं मरि तैं काँ तोरि डारि कै, तब ह्वैहौ निर्बाना ॥२॥
धुनि धूनी तहँ लाइ कै बैठहु, गुरु तैं करि पहिचाना ।
निरखहु नैनन देखि मस्त ह्वै, का करि सकहु बखाना ॥३॥

---

*पास से ।

दियो दुआ* गुरु जियहु जुगन जुग, निर्भय भये निदाना ।
जगजीवन सुख भयो अनँद मन, अचल भयो बलवाना ॥४॥

॥ शब्द १७ ॥

मनुआँ साँची प्रीति लगाव ।
एकहिं तँनी सदा राखु चित, दुबिधा नहिं लै आव ॥१॥
दुनियाँ कै चार बिचार अहैं जो, सकल सबै बिसराव ।
राखहु चित्त मित्र वहि जानहु, ताही तेँ लै लाव ॥२॥
पाँच पचीस एक ठिन† आहैं, जुगुनि तेँ एइ समुझाव ।
डोरि पोढ़ि जो लागहि चरनन, बनि है तबै बनाव ॥३॥
सतगुरु मूरति निरखि रहैा तहँ, सूरति सुरति मिलाव ।
जगजिवनदास अमल‡ तेँ माते, सकल सो भरम बहाव ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

मन मेँ जेहिँ लागी जस भाई ।
सो जानै तैसै अपने मन, का सोँ कहै गोहराई ॥१॥
साँची प्रीति की रिति है ऐसी, राखत गुप्त छिपाई ।
झूँठे कहुँ सिखि लेत अहहिँ पढ़ि, जहँ तहँ झगरा लाई ॥२॥
लागे रहत सदा रस पागे, तजे अहहिँ दुचिताई ।
ते मस्ताने तिन्हहीँ जाने, तिन्हहिँ को देइ जनाई ॥३॥
राखत सीस चरन तेँ लागा, देखन सीस उठाई ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, सूरति रहे मिलाई ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

ज्ञान गुन कवन कहै रे भाई ।
माया प्रबल अंत कछु नाहीँ, सब कोइ पर्‍यो भुलाई ॥१॥

---

*असीस । †जगह । ‡नशा ।

संकर तारी लाइ रहे हैं, जोतिहिं जोति मिलाई ।
ब्रह्मा बिस्नु मन थकित भजन तें, तिनहूँ अंत न पाई ॥२॥
उहाँ रघुपति उहाँ क्रस्न कहायो, नाच्यो नाच नचाई ।
यह सब करिकै देखि तमासा, फिरि वोहि जोति समाई ।३।
रह्यो अलिप्त लिप्त नहिं काहू, जिन जैसे मन लाई ।
जगजीवन बिस्वास जिन सुमिरा, तहँ तस दरस दिखाई ।४।

॥ शब्द २० ॥

बौरे करै गुमान न कोई ।
जिन काहू गुमान मन कीन्हा, गयो छिनहिं माँ खोई ॥१॥
जनम पाइ जग यह नर देँही, मन जानै नहिं कोई ।
दियो बिसराइ नाम को मन तें, भला न जानहु कोई ॥२॥
निर्मल नाम जानि मन सुमिरै, अघ क्रम गे सब धोई ।
बड़े भाग करम तेहिं जागे, सतसँग चित्त समोई ॥३॥
भा निर्बाह बाँह गहि राख्यो, किरपा जा पर होई ।
जगजीवन न्यारे सबही तें, जानै अंत न कोई ॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

जग बिनु नाम बिर्था जानु ।
करहु मन परतीति अपने खैंचि सूरति आनु ॥१॥
धाम दौलत हरखु ना लखि, खाक करिकै मानु ।
यह तो है दिन चार का सुख, ओस तकि झरि भानु ॥२।
देखि दृष्टि पसारि सब चलि गये करिके पयानु ।
नाम रस जिन पिया तिन्ह कहँ, अमर संत बखानु ॥३॥
साथ गुरु के रहे जुग जुग, रूप तकि निर्बानु ।
जगजीवन बिस्वास करिकै, सत्तनामहिं मानु ॥४।

॥ शब्द २२ ॥

रे मन रहौ प्रीति लगाय ।
झूठि आसा और है सब, देहु सो बिसराय ॥१॥
बुंद तें इक तीनि चौथो, लियो छिनहिं बनाय ।
नाम सो वह अहै ऐसा, रहहु ते रट लाय ॥२॥
दियो जोति पसारि कै सब, रहे इक ठहराय ।
साधि साधन तका जिन केहुँ, छकित भे रस पाय ॥३॥
अहै परगट छिपा नाहीं, देत हौं बतलाय ।
जगजिवन नित पास गुरु के, चरन रहि सिर नाय ॥४॥

॥ शब्द २३ ॥

बौरे नाम भजु मन जानि ।
सत्तनामहिं गहो अंतर, लियो आहै छानि ॥१॥
त्यागि दुबिधा करहु धीरज, मानु लाभ न हानि ।
सब्द सत्त पुकारि भाखत, लीजिये यहि मानि ॥२॥
लियो केते तारि छिन महँ, कहै कौन बखानि ।
दास कहँ जहँ पर्‌यो संकट, लियो तहँ सुधि आनि ॥३॥
कौन को करि सकै बरनन, मैं अहौं काह किलानि ।
जगजीवन काँ करहु दाया, निरखि छबि निर्बानि ॥४॥

॥ शब्द २४ ॥

प्रभुजी अब मैं कहौं सुनाई ।
देखि चरित्र सबै दुनियाँ के, अब कछु कहा न जाई ॥ १ ॥
करहिं बन्दगी सीस नाइकै, पाछे करि कुटिलाई ।
ताहि पाप संताप परहिंगे, परैं नरक माँ जाई ॥२ ॥

दौलत धाम देखि कै माते, चेत हेत नहिं आई।
धाइ धाइ औरहिं समुझावैं, बिनु जल बूड़े जाई ॥३॥
करहिं पाप औ ज्ञान कथहिं बहु, आपन बिभौ बढ़ाई।
ते नर अंत नर्क माँ गलिगे, कहत सब्द गोहराई ॥४॥
डिंभ बढ़ाइ कपट करि पूजा, झूठै ध्यान लगाई।
दिना चारि जग सबहिं दिखाइनि, डारिनि जनम नसाई ॥५॥
साधु ते सीतल रहैं दीन ह्वै, जनमि जगत सुख पाई।
जगजीवन जो मन महँ जानै, तिन पर रहौ सहाई ॥६॥

॥ शब्द २५ ॥

साधो रसनि रटनि मन सोई।
लागत लागत लागि गई जब, अंत न पावै कोई ॥१॥
कहत रकार मकारहिं माते, मिलि रहे ताहि समोई।
मधुर मधुर ऊँचे को धायो, तहाँ अवर रस होई ॥२॥
दुइ कै एक रूप करि बैठे, जोति झलमली होई।
तेहि काँ नाम भयो सतगुरु का, लाह्यो नीर निचोई ॥३॥
पाइ मंत्र गुरु सुखी भये तब, अमर भये हहिं वोई।
जगजीवन दुइ कर तैं चरन गहि, सीस नाइ रहे सोई ॥४॥

॥ शब्द २६ ॥

मन तुम का औरहिं समुझावहु।
आपुहिं समुझहु आपुहिं बुझहु, आपुहिं घट माँ गावहु ॥१॥
ऊँचे जाहु निचे काँ आवहु, फिरि ऊँचे कहँ धावहु।
जवनि रसनि* लागी तुमहीं काँ, तौनिउ रसनि मिटावहु ॥२॥

*स्वाद, चाट।

देखहु मस्त रहहु ह्वै मनुआँ, चरनन सीस नवावहु ।
ऐसी जुगुति रहहु ह्वै लागे, कबहुँ न यहि जग आवहु ॥३॥
जुग जुग कबहुँ अंग नहिं छूटै, और सबै बिसरावहु ।
जगजीवन परकास बिदिति छबि, सदानन्द सुख पावहु ॥४॥

॥ शब्द २७ ॥

साधो जस जाना तस जाना ।
जैसा जा को जानि परा है, सो तैसै मन माना ॥१॥
अपनी अपनी बानी बोलहिं, हमहिं सिखावहिं ज्ञाना ।
अपने मन कोइ समुझत नाहीं, आहहिं बड़े हेवाना ॥२॥
लागत नहिं जागे की बातैं, सोवत सबै निदाना ।
सोवत चौंकि के जागि परे जे, आगम दीन्ह तेवाना* ॥३॥
चले पंथ चढ़ि गये गगन कहँ, थिर ह्वै रहे ठहराना ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, तकि सूरति निर्बाना ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

साधो जिन्ह जाना तिन्ह जाना ।
जेहिकाँ जैसे जानि परा है, तेहिं तैसे मन माना ॥१॥
माला मुद्रा तिलक बनाइ कै, पूजहिं काँस पषाना ।
जस बिस्वास बँध्यो है जिन्ह के, तेहि काँ तस परमाना ॥२॥
जो जस जानत तेहिं तस जानत, अस है कृपानिधाना ।
अपरम्पार अपार अहै गति, को करि सकै बखाना ॥३॥
व्यापि रह्यो जल थल महँ आपुहिं, कहँहुं नहीं बिलगाना ।
जगजीवन न्यारा है सब तें, संतन महँ ठहराना ॥४॥

---

*सोच, फ़िकूर ।

॥ शब्द २९ ॥

साधो परगट कहौं पुकारी ।
दुइ अच्छर ततसार अहै एइ. नाम की बलिहारी ॥१॥
लीन्ह्यो छानि जानि कै मन तें, दृढ़ कै डारि सँभारी ।
लागि रहै निसु बासर मन तें, कबहूँ नाहिं बिसारी ॥२॥
बिन बिस्वास आस नहिं पूजै, भूला सब संसारी ।
देँही पाइ कनक काया को, डारिनि जनम बिगारी ॥३॥
देत अहौं सुनाइ सिखाये, सत मत गहौ बिचारी ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, निरखत अहै निहारी ॥४॥

॥ शब्द ३० ॥

साधो कहत अहौं गोहराइ ।
सत्त नाम रस अम्रित पीवहु, चरन तें लौ लाइ ॥१॥
पिया नहिं सो जिया नाहीं, रहे मन पछिताइ ।
काल मारिके खाइ लीन्हो, केहु लीन्ह नाहिं बचाइ ॥२॥
ज्ञान बेद गिरंथ भाषत, दीन्ह प्रगट बताइ ।
भजै नहिं सो जानि मन महँ, भाड़ पड़े सो जाइ ॥३॥
भजत तजत अँदेस मन रति, नाम की सरनाइ ।
जगजिवनदास मिटाइ संकट, जनहिं लेहिं बचाइ ॥४॥

॥ शब्द ३१ ॥

साधो नाम तें रहु लौ लाय । प्रगट न काहू कहहु सुनाय ॥१॥
झूठै परगट कहत पुकारि । ता तें सुमिरन जात बिगारी ॥२॥
भजन बेलि जात कुम्हिलाय । कोनि जुक्ति कै भक्ति दृढ़ाय ॥३॥
सिखि पढ़ि जोरि कहै बहु ज्ञान । सो तो नाहिं अहै परमान ॥४॥
प्रीति रीति रसना रहै गाय । सो तो राम काँ बहुत हिताय ॥५॥

सो तो मोर कहावत दास। सदा बसत हौं तिन के पास ॥६॥
मैं मरि मन तें रहे हैं हारि। दिप्र जोति तिन कै उजियारि ॥७॥
जगजिवनदास भक्त भे सोइ। तिनका आवागवन न होइ ॥८॥

॥ शब्द ३२ ॥

साधो रटन रटत रट लावा।
दुइ अच्छर बिचारि कै लीन्ह्यो, सो अन्तर लै लावा ॥१॥
परगट कहे साँचु नहिं मानत, सुनि काहू नहिं भावा।
काहू के परतीत नहीं है, केतो कहि समुझावा ॥२॥
करता नाम अहै अस खाविंद, जिन्ह सब रचि के बनावा।
हम का जानि परत है सोई, तेहि काँ सीस नवावा ॥३॥
लियो चढ़ाइ गयो मंडफ काँ, गुरु तें भेंट करावा।
मिटिगा जापु आपु माँ मिलिगा, एकहि एक कहावा ॥४॥
रहि निरथाइ दृष्टि तें देखा, झलकि दरस तब पावा।
जगजीवन ते निर्भय ह्वैगे, अभय निसान बजावा ॥५॥

॥ शब्द ३३ ॥

साधो मैं प्रभु तें लौ लाई।
जानौं नहीं अजान अहौं मैं, उनहीं राह बताई ॥१॥
कोइ निंदा कोइ अस्तुति करई, कोई करै दिनताई।
जो जैसी करि मन महँ जानै, तेहिं तस प्रगटहि जाई ॥२॥
कोइ कहे कूर* पूर नहिं भाषै, रामहिं नाहिं डेराई।
मैं तो अहौं इक नाम भरोसे, ताही की प्रभुताई ॥३॥
होइ है सोई टरै का नाहीं, ब्रह्मा बचन सुनाई।
साधुन की जे निंदा करि हैं, परि हैं नरक ते जाई ॥४॥

*कटु बचन।

नैन देखि कै स्रवन सुनि कै, कहत अहौं गोहराई ।
जगजीवन कहि साँच सब्द यह, छोड़ि देहु गफिलाई ॥२॥

॥ शब्द ३४ ॥

साधो नाम भजे सुभ होई ।
तजि हंकार गुमान दीन ह्वै, सीतल अंतर सोई ॥१॥
लै लगाय रहि सत्तनाम तें, संगति नाहिं बिछोई ।
किये गुमान भक्त जन तें जिन्ह, तेऊ गये बिगोई ॥२॥
समय पाइ जिन जाना नाहीं, मोह के भर्म फँसोई ।
अंत काल कष्टित जम कीन्हो,चले मनहिं मन रोई ॥३॥
रहौ जगत माँ लीन नाम तें, मैं तैं दुबिधा धोई ।
जगजीवन भौजाल छूटिगा, चरनन रहे समोई ॥४॥

॥ शब्द ३५ ॥

जो कोइ घरहिं बैठा रहै ।
पाँच संगत करि पचीसौ, सब्द अनहद लहै ॥१॥
दीन सीतल लीन मारग, सहज बाहनि बहै ।
कुमति कर्म कठोर काठहिं, नाम पावक दहै ॥२॥
मारि मैं तैं लाय डोरी, पवन थाँभे रहै ।
चित्त कर तहँ सुमति साधू, सुरति माला गहै ॥३॥
राति दिन छिन नाहिं छूटै, भक्त सोई अहै ।
जगजीवन कोइ संत बिरला, सब्द की गति कहै ॥४॥

॥ शब्द ३६ ॥

सत्त नाम बिना कहौ, कैसे निस्तरिहौ ।
कठिन अहै माया जार, जा को नहिं वार पार,
कहौ काह करिहौ ॥ १ ॥

हो सचेत चौंकि जागु, ताहि त्यागि भजन लागु,
अंत भरम परिहै।
डारहि जमदूत फाँसि, आइहि नहिं रोइ हाँसि,
कौन धीर धरिहै॥ २॥
लागहि नहिं कोइ गोहारि, लेइहि नहिं कोइ उबारि,
मनहिं रोइ रहिहै।
भगनी सुत नारि भाइ, मातु पितु सखा सहाइ,
तिनहिं कहा कहिहै॥ ३॥
आइहि नहिं डोलि बोलि, नैनन टक लाय रहिहै।
काहुक नहिं कोउ जगत, मनहिं अपने जानु गत,
जीवत मरि जाहु दीन अंतर माँ रहिहै॥४॥
सिद्ध साध जोगि जती, जाइहि मरि सब कोई,
रसना सतनाम गहि रहिहै।
जगजिवनदास रहै बैठे, सतगुरु के पास चरन,
सीस धरि रहिहै॥ ५॥

॥ शब्द ३१ ॥

मनहिं मारि गहहु नाम, देत हैाँ सिखाई।
सोवत जागत ठाढ़ि बैठि, बिसरि नाहिं जाई॥१॥
तजि दे गुमान गर्ब, मैं तैं गफिलाई।
निंदा कुटिलइ बिबाद, दूरि दे बहाई॥२॥
पाँच पचीस खैँचि ऐँचि रखिये अरुझाई।
सीतल सुसील छिमा, करि रहु दिनताई॥३॥
ऐसी जुक्ति भक्ति की, सो सब्द कहि बताई।
जगजीवन गुरु चरनन, रहहु चित्त लाई॥४॥

॥ शब्द ३८ ॥

अरे मन रहहु चरन तें लाग । इत उत सकल देहु तुम त्याग १
दुइ कर जोरि कै लीजै माँग । सोवत उठहु मोह तें जाग २।
नयन निरखि छबि रहु रस पाग । कर्म भर्म सब जैहहिं भाग ॥३
जगजीवन अस रहु अनुराग । जानु आपने तबहीं भाग ॥४॥

॥ शब्द ३९ ॥

सुमिरहु मन मत्तनाम सकल धंध त्यागी ॥टेक॥
काहे अचेत सूत बौरे, चौंकि जगु अभागी ।
ज्ञान ऐना देखि करि कै, उलटि रहहु लागी ॥१॥
छिया बुंद कै पहिरि जामा, भयो आय खाकी ।
जायगा घर पवन अपने, रहै ना कछु बाकी ॥२॥
आयो एहि जग कौल करि कै, लियो सत सुधि माँगी ।
भूलि गा वह सब्द पछिला, माति* मद रस पागी ॥३॥
दौरु मुरख चूकु ना तैं, दृढ़ मत अनुरागी ।
जगजिवन बिस्वास के बसि, होय तब बैरागी ॥४॥

॥ शब्द ४० ॥

साधो सब्द कहै सो करिये ।
अंतर नाम रहै रटि लागी, गुप्त भक्त माँ रहिये ॥१॥
तजहु कुसब्द बोलु सुभ बानी, अपने मारग चलिये ।
करि बिबेक अरु समुझि ज्ञान तें, भरम भुलाइ न परिये ॥२॥
करम काँट† पर मारग आहै, खबरदार पग धरिये ।
जगजीवन चलु आपु बचाई, भवसागर तब तरिये ॥३॥

*मस्त । †काँटा ।

॥ शब्द ४१ ॥

साधो नाम जपहु मन जानि ।
जनम पाइ सुफल करि जावहु, दृढ़ प्रतीत जिय आनि ॥१॥
रहहु गुप्त गहे अंतर माँ, मानहु लाभ न हानि ।
अस दृढ़ भक्ति करहु गहि चित महँ, कहत हौं भेद बखानि ॥२॥
हर्ष सोक ते समुझे रहिये, ज्ञान तत्त लै छानि ।
इत उत कबहुं चलै मन नाहीं, रहि अंतर ठहरानि ॥३॥
ऐसी जुगत जगत माँ रहिये, सीतल सील पिछानि ।
जगजीवन अमृत पिउ अम्मर, जोतिहिं रहहु समानि ॥४॥

॥ शब्द ४२ ॥

अब जग पर्‌यो धूमा धाम ।
चेत नाहीं अहै गाफिल, भजत नाहीं नाम ॥१॥
करत है कुटिलाइ निंदा, काम करम हराम ।
पछिताहुगे मन समुझु तकु तन, होइ दुक्ख बियाम ॥२॥
काटिहैं जम दूत कुल्हरा, अइहै नहिं कोइ काम ।
होइहि नास निरास होइहै, भूलिहै धन धाम ॥३॥
झूठ कहि बहु करहि बातैं, खाइ फूलि अराम ।
तोरि पाँजर नरी* दाबहिं, भूलिहै इतमाम† ॥४॥
देहु नहिं दुख दया राखहु, गहहु मन महँ नाम ।
जगजीवन बिस्वास करि, सो पाइ सुख बिस्राम ॥५॥

॥ शब्द ४३ ॥

मन महँ नाम हौं भजि लेहु ।
बहुरि फिरि पछिताहुगे बहु, दोस नाहीं देहु ॥१॥

---

*नटई, गला । †इहतिमाम ।

करहु अंतर ज्ञान अपने, जियत सब तजि देहु ।
अंत भल कछु होय नाहीं, कागद गलि ज्यों मेहु ॥२॥
भूलु नहिं जग देखि माया, छुटहिं सबै सनेहु ।
गहु बिचारि सँभारि के चित, झूठि काया गेहु ॥३॥
देखु नैन उघारि जग सब, जात लेहू लेह ।
जगजिवनदास करार नहिं, गुरु चरन सीसहिं देहु ॥४॥

॥ शब्द ४४ ॥

साधो देखि करै नहिं कोई ।
देखी करै बूझि नहिं आवै, भरम भुलाने सोई ॥१॥
जे साधुन तें करै समिताई, परै नरक महँ सोई ।
विद्या बाद बिबाद करहि हठ, गयो सर्ब सो खोई ॥२॥
बहु बकबाद चित्त थिर नाहीं, कहि भाखहुँ मैं तोई ।
भजन बिहून मोह के बस परि, मुक्ति न कैसेहु होई ॥३॥
सो ऐसै सब देखि परतु हैं, भक्त है बिरला कोई ।
जगजीवन गुरुहिं मन सुमिरहु, सूरति चरन समोई ॥४॥

॥ शब्द ४५ ॥

निर्भय ह्वै के नाचु, नाम धुन लाव रे ॥टेक॥
इतनी बिनती सुनि लेव मेरी, इत उत कतहुँ न धाव रे १
औसर बीति बहुरि पछितैहो, याही बना बनाव रे ॥२॥
देखु बिचारि कोऊ थिर नाहीं, कोऊ रहै न पाव रे ॥३॥
दुइ अच्छर अंतर रटि रहहू, तत्त सो मंत्र सुनाव रे ॥४॥
जगजीवन बिस्वास आस गहु, चरनन सीस नवाव रे ॥५॥

॥ शब्द ४६ ॥

साधो भक्ति करै अस कोई ।
जगत रमै अस सहज रीति तेँ, हर्ष सोक नहिँ होई ॥१॥
रमत रहै मन अंतर भीतर, जिभ्या बोलै न सोई ।
जो बोलै तैा डोलै वह मत, पुष्ट न कबहूँ होई ॥२॥
कैसे जपैँ मंत्र वह अजपा, दुबिधा तेँ गा खोई ।
जक्त बेद के भेदहिँ अटके, रहे बिमुख ह्वै रोई ॥३॥
तीरथ ब्रत तप दानहिँ भूले, अभिमानहिँ बिष बोई ।
आसा बाँधिनि भये निरासा, पछिताने मन वोई ॥४॥
काया यह तैा अहै खाक की, किलबिष अहै समोई ।
न्रिमल होए के नहिँ उपाय कछु, केतो जल से धोई ॥५॥
लावत खाक खाक मन नाहीँ*, भ्रमि भ्रमि ज्ञान बिगोई ।
मैँ तैँ पड़ा करम की फाँसी, नहीँ जोग दृढ़ होई ॥६॥
कबिता पंडित सुरता ज्ञानी, मन महँ देख्यो टोई ।
सोभा चाहि के भूलि फूलिगे, वह सुधि गई बिछोई† ॥७॥
मन मथि मनि लै लाइया रस, लीन्ह्यो तत्त बिलोई ।
जगजीवन न्यारे निर्बानी, मस्त भे चरन समोई ॥८॥

॥ शब्द ४७ ॥

साधो कलि‡ जन§ बिरला कोई ।
भक्त सो जग रहि न्यारे सब त, अँतर डोरि दृढ़ होई ॥१॥
कोऊ अन्न तजै पय पीवै, बरत रहै सब कोई ।
महिमा जानत आवत नाहीँ, गये सर्ब सो खोई ॥२॥

*शरीर पर भस्म मल ली पर मन को भस्म नहीं किया । †जुदा, दूर ।
‡कलियुग में । §भक्त ।

कोऊ धावत तीरथ न्हावै, मन नहिं देख्यो टोई ।
स्याने हइ मन मैल महा अघ, निर्मल कबहुँ न होई ॥३॥
छाँड़त लोन मोम दिल नाहीं, करत तपस्या सोई ।
कंद मूल खनि* खात जँगल माँ, ऐसहुँ भक्ति न होई ॥४॥
तन दाहत कर धौंचहिं तूरत† ठार‡ रहत है सोई ।
आसन मारि बिंबौरी§ होवै तबहूँ भक्ति न होई ॥५॥
माला सेल्ही लिहे सुमिरनी, तिलक देहि रचि सोई ।
भस्म लाइ मौनी ह्वै बैठे, तबहूँ भक्ति न होई ॥६॥
जगत रहे सोवै नहिं कबहूँ, गावै बजावै सोई ।
महा दीन ह्वै रहे जगत माँ, तबहूँ भक्ति न होई ॥७॥
पढ़ै पुरान गरंथ रात दिन, करै कबिताई सोई ।
ज्ञान कथै पद सब्द कहै बहु, तबहूँ भक्ति न होई ॥८॥
दीन्हेउ केहु चढ़ाइ गगन कहँ, आइ नीचे रहे रोई ।
थिर ह्वै वहाँ रहन नहिं पावै, माया रहे समोई ॥९॥
सतगुरु पारस जेहिं काँ बेधा, मन का मैल गा धोई ।
जगजीवन ते भक्त कहाये, सूरति बिलग न होई ॥१०॥

॥ शब्द ४८ ॥

तूँ गगन मँडल धुनि लाव रे ॥टेक॥
सुरति साधि के पवन चढ़ावहु, सकल सबै बिसराव रे ॥१॥
थिर ह्वै रहि ठहराय देखु छबि, नयन दरस रस पाव रे ॥२॥
सो तुम होहु मस्त लै मनुआँ, बहुरि न एहि जग आव रे ३
जगजिवनदास अमर दरपहु नहिँ, गुरु के चरन चित लाव रे ४

*खोद कर। †ऊर्द्धबाहु का भेष धरना। ‡बर्फ़ में रहना या ठाढ़े यानी खड़े रहना। §जिस के बदन पर मिट्टी जम जाने से दीमकों ने बिमौट यानी बिल बना लिये हैं।

॥ शब्द ४९ ॥

यहि बन गगन बजाव बँसुरिया ।
कौनहुँ नहिँ गुमान तकि भूलो, अंग अंग गलि जाइ पसुरिया १
इहाँ तो कोइ रहै नहिँ पाइहि, चला जात है साँझ सबेरिया ।
धैकै पकरि बाँधि लैजाई, कोउ न राखि सकहि बरियरिया* ॥२॥
एहि का अंत खोज कछु नाहीँ, आवत जात रहट की घरिया ।
कोउ फूटत कोउ छूँछ पानि नहिँ, कोनिउ जात अहै जल भरिया ३
अब तू दौरि धाइ नहिँ भटकसि, ले सँवारि नहिँ होवे करिया ।
जगजीवन निर्मल छबि मूरति, निरखु देखु मन मस्त करैया ४

॥ शब्द ५० ॥

सुनु बिनु नाम नहिँ निस्तार ।
बेद ज्ञान गरंथ भाखै समुझु सो तत सार ।१।
भूलु नाहिँ सम्हारु आपुहिँ कठिन माया जार ।
डारि फाँसी बाँधि लैहै नाहिँ छूटनहार ॥२॥
जानि पायो जुगति ऐसी नाम अजपा धार ।
ताहि सँग तू रंग रस लै पहुँचु गुरु दरबार ॥३॥
गुरू का चौगान आसन निर्मलं उँजियार ।
पहुँचि निरखु बिहून† नैना लागिहै तब पार ॥४॥
सीस दैकै रहो चरनन त्यागु सर्ब बिचार ।
जगजिवन दासं भक्त होवै छूटि माया जार ॥५॥

॥ शब्द ५१ ॥

साधो भक्ति करै अस कोइ ।
अंतरै दुइ अछर सुमिरै, भक्त तबहीँ होइ ॥१॥

---

*जबरदस्ती से । †बिना, बग़ैर ।

तजै बाद बिबाद सब तैं, दुक्ख नहिँ केउ देइ ।
रहै सहज सुभाव अपने, भक्ति मारग सोइ ॥२॥
करै नहिँ कछु डिंभ कबहूँ, डारि मैं तैं खोइ ।
दीन लीनं सीतलं मन, गुप्त राखै सोइ ॥३॥
कहै नहिँ कछु प्रगट भेदं, चित्त चरन समोइ ।
जगजिवन बहु बकबाद त्यागै, निर्मलं तब होइ ॥४॥

॥ शब्द ५२ ॥

अरे मन भजहु अजपा बानि ।
भूलु नहिँ तकि जगत माया, सर्ब बिरथा जानि ॥१॥
भाग बड़ नर देँह पायो, समुझि नहिँ मन आनि ।
अंत फिर पछिताइहौ, जब होइ तन की हानि ॥२॥
करहिँ त्रास निरास होइहैा, दूध नीर ज्योँ छानि ।
काम नहिँ कोइ आइहै, फिर खैँचि लेहै तानि ॥३॥
काल करिहै हालि औरै, मानिहै नहिँ कानि ।
खाँड जैसे मिलाइ तक्कर*, पाइ जाइहि सानि ॥४॥
जिवत लेहु सँवारि तन मन, वारि प्रीतिहिँ ठानि ।
जगजीवन अब नाहिँ डर, जौ चरन रहि लपटानि ॥५॥

॥ शब्द ५३ ॥

अरे मन अनत नाहीं धाव ।
गगन कोठे बैठि रहु तैं, सकल सब बिसराव ॥१॥
तखत नीचे बैठि रहि करि, माथ गुरु काँ नाव ।
ले सँभारि सँवारि आपुहिँ, मिलहि नहिँ फिर दाव ॥२॥

---
*मट्ठा ।

भूलि के तू फूलु नहिँ जग, झूठ सबै बनाव ।
अचल नहिँ चलि जायगा, सब मृतक काया गाँव ॥३॥
अमर होउ सत परस करि के, देत इहै सिखाव ।
जगजीवन के सत्तगुरु तुम, दास तुम्हरै आउँ ॥४॥

॥ शब्द ५४ ॥

सुनु सखि अब मैं कहौं समुझाई ।
बिनु पिय भेँट भटकि तुम फिरिहौ, इहै मंत्र मैं कहा सुनाई१
करहु बिचार सँवार चहौ जो, कहौं करहु सो तैसे जाई ।
यह उपदेस अँदेस मिटैहै, गहु दृढ़ मता छाडु दुचिताई ॥२॥
पाँचो साथ हितू तोरे बैरी, पल पल देत इहै भरमाई ।
नारि पचीस लिहे सँग डोलहिँ, इन तेँ नहिँ कछु तोर बसाई ३
एइ सब लाइ लेहु सँग अपने, गगन मँदिल चल पहुँचो जाई ।
सात भँवरि करि पिय तेँ भेँटो, सर्ब कलपना सो मिटि जाई ४
निरति निरखि करि यह मति तुम्ह मिलि, कबहुँ न छूटै
अचल सगाई ।
जगजीवन सखि होइ सोहागिन, सत की सेज सूति सुख पाई५

॥ शब्द ५५ ॥

नैनन देखि कहा नहिँ जाई ।
भजहिँ न नाम काम करि जग के, कहहिँ बहुत अधिकाई १
बहु बकबाद बिबाद करहिँ हठ, केतौ कहौ समुझाई ।
निंदा करहिँ आपनी मानहिँ, परहिँ नरक महँ जाई ॥२॥
माला सेल्ही पहिरि सुमिरिनी, चंदन तिलक बनाई ।
सुमति सील तेँ न्यारे बासी, जगतहिँ ठगहिँ सिखाई ॥३॥

काया गुदरा पहिरे डोलहिं, समुझि देखु मन भाई ।
जगजीवन जग सहजै रहिये, मन तें डोरि लगाई ॥४॥

॥ शब्द ५६ ॥

ए मन जोगी करहु बिचारा ।
कहँ तैं आइसि अहसि कहाँ अब, कहाँ तोर घर द्वारा ॥१॥
को तैं अहसि चीन्हु तैं आपुहिं, का हित भयो बिसारा ।
उलटि बिचारु बिसारु जगत सब, साँईं जहाँ तुम्हारा ॥२॥
आयो फूटि टूटि नीरहिं मिलि, माया काँ बिस्तारा ।
तेहिं रत भये गये अभिमानी, कबहुँ न कीन्ह सम्हारा ॥३॥
खबरदार हो खाक लाव सत, सुन्यं होहु बिचारा ।
जगजीवन आसन दृढ़ करि कै, बैठु जहाँ उँजियारा ॥४॥

॥ शब्द ५७ ॥

कलि की रीति सुनहु रे भाई ।
माया यह सब है साँईं की, आपुनि सब केहु गाई ॥१॥
भूले फूले फिरत आय पर, केहु के हाथ न आई ।
जो है जहाँ तहाँ हीं है सो, अंत काल चाले पछिताई ॥२॥
जहाँ होय नाम कै चरचा, तहाँ आइ के और चलाई ।
लेखा जोखा करहिं दाम का, पड़े अघोर नरक महँ जाई ॥३॥
बूड़हिं आपु औरन कहँ बोरहिं, करि झूठी बहुतक बकताई ।
जगजीवन मन न्यारे रहिये, सत्त नाम तें रहु धुनि लाई ॥४॥

॥ शब्द ५८ ॥

नाम बिनु नहिं कोउ कै निस्तारा ॥टेक॥
जान परतु है ज्ञान तत्त तें, मैं मन समुझि बिचारा ।
कहा भये जल प्रात अन्हाये, का भये किये अचारा ॥१॥

कहा भये माला पहिरे तें, का दिये तिलक लिलारा ।
कहा भये ब्रत अन्नहिं त्यागे, का किये दूध अहारा ॥२॥
कहा भये पंच अगिन के तापे, कहा लगाये छारा ।
कहा उर्धमुख घूमहिं घोंटे, कहा लोन किये न्यारा ॥३॥
कहा भये बैठे ढाढ़े तें, का मैानी किहे अमारा* ।
का पँडिताई का बकताई, का बहु ज्ञान पुकारा ॥४॥
गृहिनी† त्यागि कहा बन बासा, का भये तन मन मारा ।
प्रीति बिहून हीन है सब कछु, भूला सब संसारा ॥५॥
मंदिल‡ रहै कहूँ नहिं धावै, अजपा जपै अधारा ।
गगन मँडल मनि बरै देखि छबि, सोहै सब तें न्यारा ॥६॥
जेहि बिस्वास तहाँ लै लागी, तेहि तस काम सँवारा ।
जगजीवन गुरु चरन सीस धरि, छूटि भरम कै जारा ॥७॥

॥ शब्द ५९ ॥

साधो सहज भाव भजि रहिये ।
दुइ अच्छर अंतर महँ गहि रहि, भेद न काहु तें कहिये ॥१॥
जस बस्ती तैसै जंगल है, तस गृह एकहि फहिये§ ।
एहि उपाय तें पाय नाम कहँ, भक्त होन जब चहिये ॥२॥
भाग जागि तब जानु आपना, निसु दिन नहिँ बिसरैये ।
लागी रहै लगाये ऐसे, दरसन अंतर पैये ॥३॥
भेँट भई सतगुरु तें तबहीं, मगन मस्त ह्वै रहिये ।
जगजीवन करि आस नाम की, नैन निरखि छबि रहिये ॥४॥

---

*संख्या (जप की) । †स्त्री । ‡घर । §समझो ।

॥ शब्द ६० ॥

साधो मन नहिँ अंत बहाव।
जो मन बहै तो रहै कवन बिधि, गहै कवन बिधि नाँव ॥१॥
पानी* नेत्र बास है तहवाँ, तकि चलि इहै सुभाव।
धावत पल पल जो हितु लागत, तहँ करन बेलमाव† ॥२॥
काया गढ़ यह गगन कोठरी, तहाँ खैँचि बैठाव।
जो कहुँ जाय जाय नहिँ पावै, तहाँ एँचि लैआव ॥३॥
रहु थिर तहँ ठहराइ बैठिकै, सत्त सुकृत लै लाव।
जगजीवन निर्गुन निर्बानी, सीस चरन तर लाव ॥४॥

॥ शब्द ६१ ॥

आइ जग काहे मन बौराना ॥टेक॥
जौन कौल करि व्हाँ तेँ आयो, समुझि देखु वह ज्ञाना ॥१॥
तकि माया बस भूलि परेसि तैँ, सत्त नाम नहिँ जाना ॥२॥
जो उपजा सो बिनसि जायगा, होइ है अंत चलाना ॥३॥
सब चलि जाइ अचल नहिँ कोई, ससि गन मुनि जन भाना ॥४॥
जगजीवन सतगुरु समरथ के, चरन रहौ लपटाना ॥५॥

॥ शब्द ६२ ॥

साधो बिनु सुमिरन तरिहैँ नाहीँ।
दान पुन्न के रहहिँ भरोसे, केतो तिरथ नहाहीँ ॥१॥
बृच्छ दान फल देत औ॥ कहँ, वै तौ बलदे‡ नाहीँ।
दादुर देँह बर्ग नहिँ बलदे§, बसे रहैँ जल माहीँ ॥२॥
कन्द मूल भखि पवन अहारी, पय पी तनहिँ दहाहीँ।
नहिँ निर्बाह अहै याहू तेँ, परहिँ अंत भव माहीँ ॥३॥

---

*प्रकाश। †ठहराव। ‡बदल। §मैंढक की जाति पानी में रहने से नहीँ बदल जाती।

आसन मारि रहैं दृढ़ बैठे, अन्तर सूझै नाहीं ।
मन महँ फूलि भूलि गे डोरी, अंत काल पछिताहीं ॥४॥
होइ निसंक नाम कीरति गहु, रहु थिर अंतर माहीं ।
जगजीवन गुरु बास गगन महँ, सूरति राखहु ताहीं ॥५॥

॥ शब्द ६३ ॥

अरे मन अबहूँ नामहिं जान ।
आयेहु कौल करि भूलेहु सुख माँ, काहे भयहु हेवान ॥१॥
जामा साँईं सो पहिरायो, तेहि का कौन गुमान ।
केते गये पुराने चिराने, अनगन करूँ न बयान ॥२॥
टोपी सिखर बास करु तहवाँ, परसु सुरति निर्बान ।
छवि अनूप कछु बरनि न आवै, रवि ससि करौं कुर्बान ॥३॥
देखत रहहु दृष्टि नहिं टारहु, इहै सिखावौं ज्ञान ।
जगजीवन बिस्वास किहे रहु, और नहीं कछु आन ॥४॥

॥ भेद बानी ॥

॥ शब्द १ ॥

रँगि रँगि चँदन चढ़ावहु, साँईं के लिलार रे ॥टेक॥
मन तें पुहुप माल गूँथि कै, सो लै कै पहिरावहु रे ।
बिना नैन तें निरखु देखु छवि, बिन कर सीस नवावहु रे ॥१॥
दुइ कर जोरि कै बिनती करि कै, नाम कै मंगल गावहु रे ।
जगजीवन बिनती करि माँगै, कबहुँ नहीं बिसरावहु रे ॥२॥

॥ शब्द २ ॥

देखि कै अचरज कह्यो न जाई ।
तीन लोक का जो बनाव है, सो नर देंह बनाई ॥१॥
नख सिख पग कर पेट पीठि करि, सब रचि एकै लाई ।
तेहि माँ लाइ पवन एक पंछी, सबै अंग कै राई* ॥२॥
पाँच पचीस ताहि अरुझायो, रच्यो स्वाद अधिकाई ।
अपनी अपनी धावन धावैं, लाग्यो करन कमाई ॥३॥
पर्यो कर्म बस बिसरि गयो सब, सुधि बुधि नाहिँ समाई ।
निसि बासर भरमत ही बीतत, चेत हेत नहिँ आई ॥४॥
वहि घर की सुधि बिसरि गई है, जेइ करि कौल पठाई ।
बंदा तें ह्वैगे फिरि गंदा, चले अंत पछिताई ॥५॥
भूला सबै देखि धन माया, केहु के हाथ न आई ।
झूठी आस प्यास पी माते, डारिन्हि सबै नसाई ॥६॥
अहै अचेत सचेत होत नहिँ, केतौ कहै बुझाई ।
आइ जगत माँ बिंदु बुंद भा, बुंद मैं गयो समाई ॥७॥
अबहूँ समुझि देखु मन बौरे, कहत सो अहौं चेताई ।
जगजीवन कहँ प्रीति नाम से, सकल धंध बिसराई ॥८॥

॥ शब्द ३ ॥

प्रान एहुँ आइ चेत नहिँ कीन्हा ।
निर्गुन तें पयान करि आवा, नाहिँ आपु का चीन्हा ॥१॥
वहि मन मिलि कै करता ह्वैगा, अग्नि ज्वाल करि लीन्हा ।
तेहीं ज्वाल तें बुंद निकास्यो, पिंड साज छिन कीन्हा ॥२॥

*राजा

रुचि भे बहुत त्यागि नहिँ जावै, मैँ मैँ करि भे लीना ।
परे कर्म बसि हेत गयो बहु, पाछिल सुधि तजि दीन्हा । ३॥
सुद्धि सँभारि बिचारि लागि रहु, निर्मल नाम गहि लीन्हा ।
जगजीवन ते निर्गुन समाने, चरन कमल चित दीन्हा ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

साधो कवन कहै कथि ज्ञाना ।
उत्तम मध्िम पान यहु नाहीँ, नाहीँ पवन प्रमाना ॥१॥
नहिँ सीतल नहिँ गरम अहै यह, नाहीँ रुचि कछु आना ।
रचि रचि करि मिलिगा सब माँ है, है न्यारा निर्बाना ॥२॥
खात पियत डोलत सो आपुहिँ, कहै कि मैँ नहिँ जाना ।
माया माति* नाच सो नाचै, मैँ हौँ पुरुष पुराना ॥३॥
ना मैँ आयो गयो कहूँ नाहीँ, सर्गुन नाहिँ बखाना ।
जगजिवनदास नाम तेँ लीना, चरन कमल लपटाना ॥४॥

॥ शब्द ५ ॥

साधो को धौँ कहँ तेँ आवा ।
कहँ तेँ आय कहाँ को अरुझा, फिरि धौँ कहाँ पठावा ॥१॥
सो अँदेस सोच मन मोरे, कछु गति जानि न पावा ।
नीरभ† पिता रुधिर माता करि, तेहि तेँ साजि बनावा ॥२॥
नस औ हाड़ चाम मास करि, नौ दस द्वार बनावा ।
दसौ बंद दरवाजा कीन्ह्यौ, सबै जोरि गँठि लावा ॥ ३ ॥
सादी‡ पाँच बसे तेहि नगरी, हित बिष रस मन भावा ।
मिलि कै ताहि पचीस संग ह्वै, सुमति सुभाव लुटावा ॥४॥

---

*आशक्त । †बीर्य । ‡सादी=स्वादी अर्थात रस लेने वाले ।

करि परपंच रैन दिन बितयो, मैं तैं जनम गँवावा।
तीनिउ चौंपल साजि लीन्ह जिन, तिन काँ मन बिसरावा ५
माया प्रबल तिमिर नहिं सूझै, जेहि हित नाम बतावा।
जगजीवन भव धार पार ह्वै, अभय अलख गुन गावा ॥६॥

॥ शब्द ६ ॥

मन गहु सरन सतगुरु आय ॥ टेक ॥
कोट काया गगन मंदिर, तहाँ थिर भा जाय।
बैठि सब तैं ऐंठि कै, जग डारि दे बिसराय ॥ १ ॥
साथ के आनाथ भै वे, एक रहि खिसियाय।
डोरि पाँच पचीस पकरहिं, बाँधि कसि अरुझाय ॥ २ ॥
टरै नहिं टक लाय पीवै, अमी अधिक हिताय।
तृप्त कबहूँ होत नाहीं, प्यास नाहिं बुताय ॥ ३ ॥
लागि पागि कै मगन भै, सिर धुजा सत फहराय।
जगजिवन जीवै मरै नाहीं, नाहिं आवै जाय ॥ ४ ॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो कौन को धौं आहि।
कौन डोलत कौन बोलत कौन है सब माहिं ॥ १ ॥
कहाँ तैं बिस्तार कीन्ह्यो, कहाँ आय समाहि।
समुझि अचरज होत आहै, कहाँ धौं फिरि जाहि ॥ २ ॥
बना काया कोट बास, मवास* कोट के माहिं।
कोट टूटा कर्म फूटा, रह्यो फिर कछु नाहिं ॥ ३ ॥
गाँव ठाँव औ नाँव नाहीं, गैब गैबी माहिं।
होय यहु मन जीव तेहि मिलि, एक दूसर नाहिं ॥ ४ ॥

---

*रक्षा, पनाह।

लेहु अब पहिचानि औसर, बहुरि पैहहु नाहिँ ।
जगजिवनदास सँभार करिकै, चरन भजु मन माहिँ ॥ ५ ॥

॥ शब्द ८ ॥

साधो इक बासन गढ़ै कुम्हार ।
तेहि कुम्हार का अंत न पावौ, कैसो सिरजनहार ॥ १ ॥
अग्नि उठाय निकासत पानी*, रचि रँगि रूप सँवार ।
तीनि चौथ दरवाज बनायो, तौ महँ नाहिँ किवार ॥२॥
भीतर रंग बिरंग तिरंगै, उलत अहहिँ धुधकार ।
पवन ब्रम्ह तहँ बाजहि आपुहिँ, आपु बजावनहार ॥ ३ ॥
आपु जनावत आपुहिँ जानत, आपुहिँ करत बिचार ।
अपुहिँ ज्ञान ध्यान तेँ लाग्यो, आपु बिबेक बिस्तार ॥४॥
छिन छिन गावत छिन छिन रोवत, छिन छिन सुरति सुधार ।
जगजीवन आपुहिँ सब खेलत, आपुहिँ सब तेँ न्यार ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

साधो साध अंतर ध्यान ।
दीन लीनं सीतलं ह्वै, तजहु गर्ब गुमान ॥ १ ॥
गंग ग्राम बजार लावहु, चित्त गाड़ु निसान ।
सत्त हाट निहारि निरखहु, लेहु करि पहिचान ॥ २ ॥
रैन दिन तहँ नाहिँ आहै, नाहिँ ससि गन भान ।
चमक झलमल रूप निर्मल, निर्गुनं निर्बान ॥ ३ ॥
सुद्धि बुद्धी नाहिँ आहै, कौन भाषै ज्ञान ।
जगजिवनदासं मस्त होवै, बिरल कोउ ठहरान ॥ ४ ॥

*बीर्य्य ।

॥ शब्द १० ॥

मन रे आप कों तैं चीन्ह ।
आस के घर कहाँ आहै, कहाँ बासा लीन्ह ॥ १ ॥
चेत करु अब हेत उन तैं, जिन रे यहु सब कीन्ह ।
डारि दीन्ह बहाइ तुम कहँ, दगा तुम तैं कीन्ह ॥ २ ॥
आइ पर घर पहिरि जामा, जगत बासा लीन्ह ।
संग तेहिं बहुरंग तसकर*, बड़ा अजुगुति कीन्ह ॥ ३ ॥
ऍचि खैंच लगाव धागा, तिलक दै सत चीन्ह ।
जगजिवन गुरु चरन परि कै, जुग जुग अम्मर कीन्ह ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

काया कैलास कासी राम सो बनायो ॥ टेक ॥
जा को वार पार नाहिं, अंत नाहिं पायो ।
तीनि लोक दस दुआर, दरवाज नाहिं लायो ॥ १ ॥
तीरथ तेहि माँ कोटिन्ह, गुरू सो बतायो ।
तस्कर तहँ बहुत पाँच, अपथ ही चलायो ॥ २ ॥
पचीस सेन बाँधि साथ, जहँ तहँ उठि धायो ।
लागे सब बिगारन हिं, से रावन दुख पायो ॥ ३ ॥
चौंकि मनुवाँ जागि धागा, गगनहिं गढ़ लायो ।
जगजिवन उसवास† मिटि गा, दरस सतगुरु पायो ॥ ४ ॥

॥ शब्द १२ ॥

अरे मन रहहु थिर ठहराय ।
बेद ग्रंथ संत संत कहि, सुकृत दीन्ह लखाय ॥ १ ॥

---

*ठग । †अंदेशा

गगन मंडप बना है, तहँ अचल बैठहु जाय ।
तजहु आस निरास ह्वै कै, देहु सब बिसराय ॥ २ ॥
भान गन ससि नाहिं निसु दिन, पवन नहिं संसाय ।
चमक झलमल रूप निर्मल, रहहु इक टक लाय ॥ ३ ॥
तजहु नहिं परसंग कबहूँ, बैठि जुगहिं दृढ़ाय ।
जगजिवन निर्बान सतगुरु, चरन रहु लपटाय ॥ ४ ॥

॥ शब्द १३ ॥

बिरिछ* के ऊपर मँदिल बनावा ।
ताहि मँदिल इक जोगी आवा ॥ १ ॥
जोगी भागि अनत काँ जाय, मँदिल अपने मन पछिताय ॥२॥

॥ दोहा ॥

ताहि मँदिल को गृह भयो, ता में दिसि न दुवार ।
ता के भीतर रहत है, बिधना देत अहार ॥ ३ ॥

॥ शब्द १४ ॥

सखि बाँसुरी† बजाय कहाँ गयो प्यारो ॥ टेक ॥
घर की गैल बिसरि गै मोहिं तेँ अंग न बस्तु सँभारो ।
चलत पाँव डगमगत धरनि पर, जैसे चलत मतवारो ॥१ ॥
घर आँगन मोहिं नीक न लागै, सब्द बान हिये मारो ।
लागि लगन मैँ मगन वहाँ सोँ, लोक लाज कुल कानि बिसारो २
सुरत दिखाय मोर मन लीन्ह्यो, मैँ तौ वहौँ होय नहिं न्यारो ।
जगजीवन छबि बिसरत नाहीं, तुम से कहौँ सो इहै पुकारो ॥३॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो बूझे बिनु समुझि न आवै ।
अंध अहै भव जाल मैँ बंधा, को काहि कै गोहरावै ॥ १ ॥

---

*पेड़ । †भँवर गुफा का शब्द ।

बाहर निसु दिन भटकत भरमत, थिर नहिँ कबहूँ आवै ।
बूड़त जानि मानि भवसागर, अवरन कहँ समुझावै ॥ २ ॥
बहु बकताई करत फिरत है, रचि बहु भेष बनावै ।
सिख पढ़ि करहि बिबाद जहाँ तहँ, आपन अंत न पावै ॥३
पाइ जोग केहु भेद भाँड़ गति, गहि दम साँस न आवै ।
दुखित होत तन फूलि मसक से, दुइ कर पेट ठठावै ॥ ४ ॥
यहु नहिँ जोग रोग है भाई, साधू नाहिँ बतावै ।
सहज रीति मन साध पवन गहि, अठदल कमल समावै ॥५॥
अजपा जपत रहै बिन जिभ्या, मधुर मधुर मधु पावै ।
ह्वै मस्तान मगन ह्वै गावै, बहुरि न यहि जग आवै ॥ ६ ॥
अस मत गहै रहै केहु बिधि, काहु न भेद बतावै ।
जगजीवन सुख तब हीं पावै, सूरति रत्त मिलावै ॥ ७ ॥

॥ शब्द १६ ॥

साधो को धौं कहँ तेँ आवा ।
खात पियत को डोलत बोलत, अंत न काहू पावा ॥१॥
पानी पवन संग इक मेला, नहिँ बिबेक कहुँ गावा ।
केहि के मन को कहाँ बसत है, केइ यहु नाच नचावा ॥२॥
पय महँ घृत घृत महँ ज्यौं बासा, न्यारा एक मिलावा ।
घृत मन बास पास मनि तेहि माँ, करि सो जुक्ति बिलगावा ३
पावक सर्ब अंग काठहि माँ, मिलि के करषि* जगावा ।
ह्वै गै खाक तेज ताही तेँ, फिर धौं कहाँ समाया ॥४॥
भान समान रूप सब छाया, दृष्ट सबै तेँ माँ आवा ।
परि घन† कर्म आनि अंतर महँ, जोति खैँचि लै आवा ॥५॥

---

*धौंक कर । †बादल रूपी कर्म ।

अस है भेद अपार अंत नहिँ, सतगुरु आनि बतावा।
जगजीवन जस बूझि सूझि भै, तेहि तस भाखि जनावा॥६॥

॥ शब्द १७ ॥

जा के लगी अनहद तान हो, निरबान निरगुन नाम की॥१॥
जिकर करके सिखर हेरे, फिकर रारंकार की॥२॥
जा के लगी अपजा गगन झलकै, जोत देख निसान की॥३॥
मढ़ु मुरली मधुर बाजै, बाँए किँगरी सारँगी।४॥
दहिने जो घटा संख बाजै, गैब धुन झनकार की॥५॥
अकह की यह कथा न्यारी, सीखा नाहीँ आन है॥६॥
जगजीवन प्रान सोध के, मिल रहे सतनाम है॥७॥

॥ शब्द १८ ॥

साधो समुझि बूझि मन रहना।
डोरी पोढ़ि लाय कै रहिये, भेद न काहू कहना॥१॥
गुरु परताप नाम जिन पायो, बड़े ताहि के लहना।
लियो सँभारि सँवारि पवन गहि, गगन मँदिल ठहराना॥२॥
चाँद सुरज दिन रजनी नाहीँ, सब्द रसालहिँ ज्ञाना।
सिव ब्रह्मा बिस्नू मन तहवाँ, अलख रूप निरबाना॥३॥
रहु लव लाइ समाइ छबिहिँ तकि, जग तेँ किहे बहाना।
जगजिवनदास धन्न वै साधू, सदा रहैँ मस्ताना॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

गगरिया मोरी चित सोँ उतरि न जाय॥ टेक॥
इक कर करवा*एक कर उबहनि†, बतिया कहैाँ अरथाय॥१॥
सास ननद घर दारुन आहैं, ता सोँ जियरा डेराय॥२॥

---

*डोल। †रस्सी।

जो चित छूटै गागरि फूटै, घर मोरि सासु रिसाय ॥३॥
जगजीवन अस भक्ती मारग, कहत अहौं गोहराय ॥४॥

॥ शब्द २० ॥

और फिकिर करि फरके*, जिकिर† लगाउ रे ॥टेक॥
सूरति सूवा‡ करि, गगनै बैठाउ रे ।
तहँ हरि हरि करि, कहि कै पढ़ाउ रे ॥१॥
साँईं एक, एक करि जानु रे ।
दुबिधा नहिँ मन, कबहुँ लै आउ रे ॥ २ ॥
जगजिवनदास तहँ, सुरति निहारु रे ।
दुइ कर जोरि करि, साँईं मनाउ रे ॥३॥

॥ शब्द २१ ॥

सत्त नाम मन गावहु रे ॥ टेक ॥
यहु मन दृढ़ करि अंतर राखहु, अनत न कबहुँ बहावहु रे ।१।
मैं तैं गरब गुमानहिँ त्यागौ, दीन समनि लै [illegible] रे [illegible]
बृथा जानि सब नैनन [illegible]
जगजीवन बिन [illegible]

॥ श[illegible] ॥

सोभा प्रभु की मो से बरनि न जाई । टेक ॥
अनहद बानी मूरति बोलै, सुनहु संत चित लाई ॥ १ ॥
बिनु कर ताल पखाउज बाजै, तहँ सूरति चलि जाई ॥ २ ॥
अबरन बरन कहाँ लहि बरनौं, सब महँ रह्यो समाई ॥३॥
जगजीवन सत मुरति निरखि छबि, रहे चरन लपटाई ॥४॥

---

*दूर । †जाप । ‡तोता ।

॥ शब्द २३ ॥

बौरे मते मंत्र सुनु सोई ॥ टेक ॥
जो सुनि गुनि परतीत करि कै, तब सुख पावै सोई ॥ १ ॥
गुरुमुख मन मनि गगन मँदिल रहि, उहाँ भरम नहिँ कोई॥२
चाँद सुरज तेहिँ दिप्ति* नहीँ सम, संत बास तहँ सोई ॥३॥
जगजीवन अस पाय भाग जो, आवागवन न होई ॥ ४ ॥

॥ शब्द २४ ॥

तुम सोँ लागो रे मोर मनुआ ॥ टेक ॥
झलझल झलझल देखौँ रूप । तुम तेँ नाहीँ और अनूप ॥१॥
दिप्ति तुम्हारी आहै धूप । तकि परछाँहीँ जैसे कूप ॥२॥
सो नौखंड मँ सातौ दीप । जगजिवन गुलाम है तुम हो भूप ३

साध महिमा और असाध की रहनी

॥ शब्द १ ॥

जब मन मगन भा मस्तान ।
भयो सीतल महा कोमल, नाहिँ भावै आन ॥१॥
डोरि लागी पोढ़ि गुरु तेँ, जगत तेँ बिलगान ।
अहै मता अगाध तिन का, करै को पहिचान ॥२॥
अहैँ ऐसे जगत माँ कोइ, कहत आहैँ ज्ञान ।
ऐसे निर्मल ह्वै रहे हैँ, जैसे निर्मल भान ॥३॥
बड़ा बल है ताहि के रे, थमा है असमान ।
जगजिवन गुरु चरन परिकै, निर्गुन धरि ध्यान ॥४॥

*प्रकाश ।

॥ शब्द २ ॥

अमृत नाम पियाला पिया । जुग जुग साधू सोई जिया ॥१॥
सतगुरु सदा रहै परसंग । मस्त मगन ताही के रंग ॥२॥
तकि कै अंत कतहुँ नहिँ जाय । निर्मल निर्गुन निरखि रहाय ॥३॥
जेहि की माया का बिस्तार । को बपुरा करि सकै बिचार॥४॥
ब्रह्मा थके बेद गुन गाय । थकित भये सिव ताड़ी लाय ॥५॥
ठाढ़े रहहिँ बिस्नु कर जोरि । निर्मल जोति अहै तिन्ह कोरि६
जगजीवन सो धरि रहे ध्यान । सतगुरु सुरति निर्मल निर्बान॥७

॥ शब्द ३ ॥

साधो खेलि लेहु जग आय । बहुरि नहीं अस औसर पाय॥१
जनम पाय चूका सब कोय । अंतर नाम जाहि नहिँ होय॥२॥
जिन केहु उलटि कै बूझा ज्ञान । साधू सोई भया निरबान ॥३॥
तिन पर किरपा कीन्ह्यौ आय । राखि लिह्यौ चरनन सरनाय४
निरखि नैन तेँ रहि टक लाय । अमृत रस बस पियो अघाय ५
मरि अम्मर भे जुग जुग सोइ । न्यारे कबहूँ नाहीं होइ ॥६॥
जगजिवनदास धन्य वे साध । तिन का सत मत भेद अगाध७

॥ शब्द ४ ॥

गऊ निकसि बन जाहीं । बाछा उनका घर ही माहीं ॥१॥
तृन चरहिँ चित्त सुत पासा । यहि जुक्ति साध जग बासा॥२॥
साध तेँ बड़ा न कोई । कहि राम सुनावत सोई ॥३॥
राम कही हम साधा । रस एक मता औराधा ॥४॥
हम साध साध हम माहीं । कोउ दूसर जानै नाहीं ॥५॥
जिन दूसर करि जाना । तेहिँ होइहि नरक निदाना ॥६॥
जगजिवन चरन चित लावै । सो कहि के राम समुझावै॥७॥

॥ शब्द ५ ॥

जस घृत पय मैं बासा। अस कीन्हे रहौं निवासा ॥१॥
साध पुहुप कर नाऊँ। मैं तहँ तैं बास* बसाऊँ ॥२॥
.स अहै मोर परसंगा। मैं साध साध मोर अंगा ॥३॥
जगजीवन जिन जाना। से भक्त भये निर्बाना ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

साध कै गति को गावै। जो अंतर ध्यान लगावै ॥१॥
चरन रहे लपटाई। काहू गति नाहीं पाई ॥२॥
अंतर राखै ध्याना। कोइ बिरला करै पहिचाना ॥३॥
जगत किहो एहि बासा। पै रहैं चरन के पासा ॥४॥
जगत कहै हम माहीं। वै लिप्त काहु माँ नाहीं ॥५॥
जस गृह तस उद्यानां†। वै सदा अहैं निरबाना ॥६॥
ज्यौं जल कमल कै बासा। वै वैसे रहत निरासा ॥७॥
जैसे कुरम‡ जल माहीं। वा की सुति अंडन माहीं ॥८॥
भवसागर यह संसारा। वै रहैं जुक्ति तैं न्यारा ॥९॥
ज्यौं मक डोर बढ़ावै। जो नीच ऊँच काँ धावै ॥१०॥
जगजीवन ठहराना। से साध भया निरबाना ॥११॥

॥ शब्द ७ ॥

मन मैं जेहि लागी तेहि लागी है ॥ टेक ॥
रहे बेसुद्ध सुद्धि तब नाहीं, चौंकि उठे तब जागी है ॥१॥
पाँच पचीस बाँधि इक डोरी, एकौ नहिं कहुँ भागी है ॥२॥
मैं तैं मारि बिचारि गगन चढ़ि, दरस पाय रस पागी है ॥३॥

---

*सुगंधि। †बैरगाह, जंगल। ‡कछुआ।

गहि सतगुरु के चरन रहे हैं, मस्त भये बैरागी हैं ॥४॥
जगजीवन ते अम्मर जुग जुग, नहिं सतसंगति त्यागी है ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

बौरे त्यागि देहु गफिलाई ।
डरत रहहु मन संत राम कहँ, कहत अहौं गोहराई ॥१॥
संतन दीन हीन नहिं जानहु, कठिन तेज अधिकाई ।
जब चाहहिं तब करहिं राम तें, लंका पतन कराई ॥२॥
जेहि मन आवत कहत सो तैसे, नाहिं सकुच कछु आई ।
होहि अकाज ताहि को बहु बिधि, रहिहै मन पछिताई ॥३॥
नृपति होय कि छत्र-पति दुनिया, भूलै ना प्रभुताई ।
रहहि जो संतन तें अधीन ह्वै, नहिं तौ खाक मिलि जाई ॥४॥
परगट कहौं छिपावौं नाहीं, जुग जुग अस चलि आई ।
जगजीवन आधीन रहैं जे, तेहि पर रहहिं सहाई ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

सत्त नाम रस अमृत पिया । सो जग जनम पाय जन जिया १
डोरी पोढ़ि रहत है लाय । सोवत जागत बिसरि न जाय ॥२॥
कबहूँ मन कहुँ अनत न जाय । अंतर भीतर रहै लव लाय ॥३॥
राम भक्त तें नाहीं न्यारे । कहौं बिचारि के सब्द पुकारे ॥४॥
भक्तजगत महँ यहि बिधि रहहीं । प्रगट भेद आपन नहिं कहहीं ५
राम तें जुदा कहै जो कोई । तेहि कै गति औ मुक्ति न होई ॥६॥
साध के दरस भाग तें पाई । है अस मत कोइ नाहिं भुलाई ॥७॥
जगजीवन निरखै निर्बान । गावत ब्रह्मा बेद पुरान ॥८॥

॥ शब्द १० ॥

अपने मन महँ सुमिरहु नाम । बाहर नहिं कछु सरिहै काम १

जो मन बाहर जाइहि धाय। बिनु जल गहिरे बूड़हि जाय २
परि भवजल माँ करहि बिगार। मनहिं मारि कै जनम सँवार ३
मन यहु साँच झूँठ है सोई। मन का भेद न पावै कोई ४
मन के सुख तन का सुख होई। मन छीजे तन सुख नहिं कोई ५
मन यहु खात अहै जल पीवै। मन यहु अम्मर जुग जुग जीवै ६
मन यहु जीव केर मनि आही। मन की मनि मथि संत लखाही ७
संतन लखि मनि राखि छिपाई। जग सब अंध अंत नहिं पाई ८
सो मनि त्रिकुटि गगन महँ बास। छानि तत्त जन करहिं बिलास ९
जग जड़ मूरख चेत न आनि। संत बचन परमान न मानि १०
जगजिवन दास धन्य वै साध। पाय मता सो भये अगाध ११

॥ शब्द ११ ॥

आपु काँ चीन्है नहिं कोई।
खात पियत को डोलत बोलत, देखत नैनन सोई ॥ १ ॥
अचरज सब्द समुझि जो आवै, सब माँ रहा समोई।
रहै निरंतर बासा कीये, कबहूँ बिलग न होई ॥ २ ॥
अच्छर चारि पँडित पढ़ि भूले, करैं चार्चा सोई।
साधन की गति अंत न पावत, जेहि का मन मति जोई ॥३॥
जिन जिन तत्तहिं मथि कै लीन्ह्यो, रहि गहि गुप्तहिं सोई।
जगजीवन धरि सीस चरन तर, न्यारे कबहुँ न होई ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

मन महँ राम रमे हैं नाहि।
लागि जब तैं पागि मन तें नाहिं अनतै जाहिं ॥ १ ॥
नाहिं आसा रही जग की, नाहिं धाइ अन्हाहिं।
सदा सूरत रहैं लाये, जपत हैं मन माहिं ॥ २ ॥

राति दिन वै रहत लागे, साध वोई आहिँ ।
बहु किये पाखंड जग महँ, भक्त हैँ ते नाहिँ ॥ ३ ॥
जपहिँ अजपा बकैँ ना वह, गुप्त जग्न रहाहिँ ।
जगजीवन वै दास न्यारे, जोति महँ मिलि जाहिँ ॥ ४ ॥

॥ शब्द १३ ॥

अब कछु नाहिँ गति कहि जात ।
साध कहि करि करहिँ दरसन, करहिँ पाछे घात ॥ १ ॥
भेष माला पहिरि लीन्हेव, नाम भज़न लजात ।
जहाँ तहाँ परमोध करि कै, स्वान नाईँ खात ॥ २ ॥
दियो अहै बढ़ाय तृस्नहिँ. नाहिँ कछु खिसियात ।
भयो गाफिल भूलि माया, नाहिँ उद्र अघात ॥ ३ ॥
देखि सिखि पढ़ि लेत आहैँ, कहैँ सोई बात ।
जहाँ तहाँ बिबाद ठानहिँ, ओस बुंद बिलात ॥ ४ ॥
साध सत मत रहत साधे, नाम रसना रात ।
जगजीवन सो पास सतगुरु, नाहिँ न्यारे जात ॥ ५ ॥

॥ शब्द १४ ॥

जिन के रसना भै नाम अधार ।
तिन के मन का अंत के पावै, ठाढ़ रहत दरबार ॥ १ ॥
तेहि जग कहहि अहहिँ दुनिया महँ, वह दुनिया तैँ न्यार ।
उन के दरस राम के दरसन, मेटत सकल बिकार ॥ २ ॥
छूटत नाहिँ कबहुँ नहिँ टूटै, तजि षट कर्म अचार ।
जानि अजान अज्ञान भे बौरे, नहिँ कोउ परखनहार ॥३॥
यह गति अहै साध कै रहनी, बिरले हैँ संसार ।
जगजीवन तिन तैँ नहिँ अंतर, तिन का भेद अपार ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

तजि कै बिबाद जक्त, भक्त भजि होवै ॥ टेक ॥
अहंकार गुमान मान, जानि दूर खोवै ।
काग ऐसो निहचिंत, कबहूँ नहिं सोवै ॥ १ ॥
रहै गुप्त चुप्प जिभ्या, प्रीति रीति होवै ।
नीर सील सींच सीतल, सहजहीं समोवै ॥ २ ॥
राखि सीस सिखर ऊपर, चरन कमल टोवै ।
नैनन निरखि दरस अमी अंग ताहि धोवै ॥ ३ ॥
भे हैं निर्बान साध, काल देखि रोवै ।
जगजीवन त्यागि सर्ब, अचल अमर होवै ॥ ४ ॥

॥ शब्द १६ ॥

साध बड़े दरियाव अंत को पावै ।
ज्ञान बास करि पास राम कहि गावै ॥ १ ॥
निर्मल मन निर्बान निर्गुनहिं समावै ।
सतगुरु बैठे पास चरन पै सीस नवावै ॥ २ ॥
सदा हजूरी ठाढ़े निरखि कै दरसन पावै ।
भाखत सब्द सुनाय जगत काँ कहि समुझावै ॥ ३ ॥
जेहि के भै परतीत ताहि काँ भक्ति दृढ़ावै ।
जहाँ नाहिं बिस्वास ताहि तें भेद छिपावै ॥ ४ ॥
जगजीवनदास गुप्त को प्रगट सुनावै ।
जेहि के जैसे भाग सो तैसे पावै ॥ ५ ॥

॥ शब्द १७ ॥

जग में बहुत बिबादी भाई ।
पढ़ि गुनि सब्द लेत हैं बहु बिधि, बातैं करहिं बनाई ॥१॥

आपु न भजहिं गहहिं नहिं नामहिं, औरन कहहिं सिखाई
कहहिं और कहँ तैं भूला है, अपुहिं परे भुलाइ ॥ २ ॥
बहुती बातैं जहाँ तहाँ की, आपन कहैं प्रभुताई ।
साधन्ह कहा सब्द सो काटहिं, परहिं नरक महँ जाई ॥३॥
जो कोउ जग महँ अंतर सुमिरै, ताहि देहिं भटकाई ।
लालच लोभ पुजावं खातिर, डारिन्ह धर्म नसाई ४ ॥
गीता ग्रंथ पढ़िन बहुतै करि, मिटो नाहिं मुरखाई ।
बिद्या मद अंधे ह्वै डोलहिं, भिड़हिं साध तें जाई ॥ ५ ॥
कोमल बानी सदा सीतल ह्वै, सब कहँ सीस नवाई ।
साधन केरे ये लच्छन हैं, करैं ते मुक्तै जाई ॥ ६ ॥
जे पूछै तेहिं राह लगावहिं, नाहिं तो रहहिं छिपाई ।
जगजीवन भजु सतगुरु चरना, बादिहिं देहु बहाई ॥ ७ ॥

॥ आरती ॥

(१)

आरति सतगुरु समरथ करऊँ । दोउ कर सीस चरन तर धरऊँ १
निरखौं निर्मल जोति तिहारी । अवर सर्बसौ देहुँ बिसारी ॥२
मैं तौ आदि अंत का आहूँ । अवर न दूजा जानौं नाऊँ ॥३
तुम्हरे आहुं सदा संग बासी । तुम बिन मनुआँ रहत उदासी ४
रह्यो अजान तुम दियो जनाई । जहाँ रहौं तहँ बिसरि न जाई५
जगजिवन दास तुम्हार कहावै । जनम जनम तुम्हरो जस गावै६

(२)

आरति सतगुरु साहेब करऊँ । आपन सीस चरन तर धरऊँ १
जब तुम मोहिं काँ दाया कीन्हा । आई सूझि बूझि मैं चीन्हा २

पास बास मैं डोलौं नाहीं । गगन मँडल रहौं सत की छाहीं३
निरखि नैन तें सुरति निहारौं। रबि ससि नेग* रूप मनि वारौं४
जगजिवनदास चरन दियो माथ। साहेब समरथ करहु सनाथ५

(३)

आरति गुरु गुन दीजै मोहीं । सुरति रहै नित चरन सनेही॥१
निकट तें भटकि कतहुँ नहिं धावै। सोवत जागत ना बिसरावै २
मैं सुधि बुधि तें आहौं हीना । रहौं मैं चरन कृपा तें लीना ३
जो तुम मोहिं काँ जानहु दासा । निर्मल दृष्टि सत दरस प्रकासा४
जगजीवन दास आपनो जानो । अवगुन अघ क्रम मनहिं
न आनो ॥ ५ ॥

(४)

आरति सतगुरु समरथ तोरी।कहँ लगि कहौंकेतक मति मोरी१
सिव रहे तारी लाइ न जाना । ब्रह्मा चतुर मुख करहि बखाना२
सेस गनेस औ जपत भवानी । गति तुम्हरो प्रभु तिनहुँ न जानी३
बिस्नु बिनय मन मनहिं समाई । कोउ बपुरा गति सकै न गाई४
ससि गन भान जती सुर सोई । सब माँ बास न दूजा कोई ॥५॥
संत तंत तें रहे हैं लागी । जेहि जस चहि तस रहि रस पागी६
जगजीवन नहिं थाह अथाहा । कृपा करहु जन कै निर्बाहा ७

(५)

आरति अरज लेहु सुनि मोरी । चरनन लागि रहै दृढ़ डोरी १
कबहुँ निकट तें टारहु नाहीं । राखहु मोहिं चरन की छाहीं २
दीजै केतिक बास यहँ कीजै । अघ कर्म मेटि सरन करि लीजै३
दासन दास हूँ कहौं पुकारी । गुन मोहिं नहिं तुम लेहु सँवारी४

---

*अनेक ।

जगजीवन काँ आस तुम्हारी । तुम्हरी छबि मूरति पर वारी५

(६)

आरति कवन तुम्हारी करई । गनि अपार केहु जानि न परई१
ब्रह्मा सेस महेस गुन गावैं । सो तुम्हार कछु अंत न पावैं २
तुमहिं पवन औ तुमहीं पानी । तुम सब जीव जोति निर्बानी३
नर्क स्वर्ग सब बास तुम्हारी । कहुँ दुख कहुँ सुख है अधिकारी४
तुम सब महँ सब तुमहिं बनावा।रहि रस बस करि नाच नचावा५
दियो चेतान करि तैसि लखाया। जगजीवन पर करिये दाया ॥६

(७)

केतिक बूझ का आरति करऊँ। जैसे रखिहहिं तैसे रहऊँ ॥१॥
नाहीं कछु बसि आहै मोरी । हाथ तुम्हारे आहै डोरी ॥२॥
जस चाहौ तस नाच नचावहु । ज्ञान त्रास करि ध्यान लगावहु३
तुमहिं जपत तुमहीं बिसरावत । तुमहिं चेताइ सरन लै आवत४
दूसर कवन एक है। सोई । जेहिं काँ चाहौ भक्त सो होई५
जगजीवन करि बिनय सुनावै । साहेब समरथ नहिं बिसरावैं ६

(८)

आरति चरन कमल की करऊँ। निकट तें दाया करु नहिं टरऊँ१
सदा पास मैं रहौं तुम्हारे । तुम महिं काँ नहिं रहहु बिसारे२
जानत रहहु जनावत सोई । तब बंदे तें बँदगी होई ॥३॥
बसि न काहु का कोऊ बिचारै । जेहि चाहै तेहि तस निस्तारै४
जगजीवन कि बिनय सुनि लीजै । अपने जन काँ दरसन दीजै५

॥ मंगल ॥

(१)

नहिँ आवै नहिँ जाइ भरोसा नाम को ॥टेक॥
ज्यौँ चकोर ससि निरखत सुधि तन नहिँ ताहि को ।
चरन सीस दै रहै भुगुतै फल काहि को ॥१॥
अपने मन माँ समुझि बूझि मैँ आहुँ को ।
केहि घर तेँ जग आइ जाउँ मैँ काहि को ॥२॥
अमर मरै नहिँ जिये फेरि घर जाइ को ।
निर्गुन केर पसार फंद भ्रम जार को ॥३॥
निर्मल मैल मेँ मिला रहै लय लाइ को ।
जगजीवन गुरु समरथ जानहि जन जाहि को ॥४॥

(२)

बिनती करौँ कर जोरि के तुमहिँ सुनावऊँ ।
दाया होय तुम्हारि तौ मंगल गावऊँ ॥१॥
देहु ज्ञान परकास तै। सत्त बिचारऊँ ।
निस दिन बिसरहुँ नाहिँ मैँ सुरति सँभारऊँ ॥२॥
तुम सब जानत अहहु जनावत हौ सोई ।
काया नगर बनाइ किह्यो रचना सोई ॥३॥
तेहि काँ अंत न खोज न गति जानै कोऊ ।
नव खिरकी दरवाजा दसव बनायऊ ॥४॥
तेहि मंदिल सत पुरुष बिराजै नित सोई ।
नगर कै सुधि सब लेहि दुःख केहु नहिँ होई ॥५॥
सर्ब नगर बस्ती कहुँ खाली नाहीँ ।
अपने रमहि सुभाउ सो आपुहि आही ॥६॥

तेहि मद्धे करि बास बिचार तेहि माहीं ।
भटक भरम मन बूझि अहै कछु नाहीं ॥७॥
बिप्र* बिस्वास तब आयो मंत्र बिचारेऊँ ।
सुरनि के पितु प्रीतम सो तिन्हहिं पुकारेऊँ ॥८॥
सुमति जो ऐसी आइ तबहिं सुख पावई ।
निर्गुन सो है दूलह तिन्हहिं बियाहई ॥९॥
सुमति सुरति की माइ बिचार्‌यो सोई ।
निरती नेह लगाइ भाग तेहि होई ॥१०॥
नाऊ नाम लीन्ह लय लगन धरायऊँ ।
नगर में गगन भवन सो तहँ कोँ आयऊँ ॥११॥
माड़ो माया बिस्तार तन तीनि बनायऊँ ।
बाँस बास गुन गूँथ जहाँ तहँ लायऊँ ॥१२॥
सहज सेहरा बनि पूरा ते सिर बाँधेऊँ ।
चौका चार बिचार राग अनुरागेऊँ ॥१३॥
पाँच बजावहिं गावहिं नाचहिं ओई ।
करहिं पचीस सो निरत एक ह्वै सोई ॥१४॥

॥ छंद ॥

एक ह्वै कै करहिं निर्त तत्त तिलक चढ़ावहीं ।
पढ़हिं अनहद सब्द सुमिरन अलख बरहिं मनावहीं ॥१५॥
गाँठि जोरी पोढ़ि कै दृढ़ भँवरि सान फिरावहीं ।
मेटि दोहाग अनेक बिधि कै सोहाग रँग रस पावहीं ॥१६॥
सूति रहि सत सेज एकै निरखि रूप निहारऊँ ।
चमकमनि झलमलित रबि ससि ताहि छबि पर वारऊँ ॥१७॥

---

*उत्तम या पवित्र जाति का मनुष्य ।

वारि डारौं सीस चरनन बिनय कै बर माँगऊँ ।
रहै सदा सँजोग तुम तेँ कबहुँ नाहीं त्यागऊँ ॥१८॥
लेउँ माँगी रहै लागी दरस नैनन चाखऊँ ।
आवागवन नेवार करिकै मन हितै करि भाखऊँ ॥१९॥
रहौं सरनं निकट निसु दिन कबहुँ नहिँ भटकावहू ।
जगजीवन के सत्त साहेब तुमहिँ ब्रत निर्बाहहू ॥२०॥

(३)

अरे यहि जग आइके कहाँ गँवायो रे ।
निर्गुन तेँ फुटि आनि धर्यो गुन, वह घर मन बिसरायो रे ॥१॥
कर्म फाँसि माँ सुख भा, सुद्धि भुलायो रे ।
रचि पचि मिलि माँटी महँ, सबै गँवायो रे ॥२॥
बहुत लागि हित माया, मन बौरायो रे ।
भाई बंधु कबीला सबै, बिचार्यो रे ॥३॥
जब तजि चलत है काया, सँग न सिधारे रे ।
रोवत मोह बस माया, हूैगे न्यारे रे ॥४॥
जीवत कस नहिँ त्यागहु, बृथा करि जानहु रे ।
आपुनि सुरति सँभारि, नाम गहि आनहु रे ॥५॥
रहहु जगत की संगति, मन तेँ न्यारे रे ।
पुहमी* पाँव उठावहु रहहु बिचारे रे ।
काँट गड़ै नहिँ पावै, रहहु सँभारे रे ॥६॥
काल तेँ कोउ नहिँ बाचहि, सब काँ खाइहि रे ।
नाम सुकृत नहिँ गहहि, अंत पछिताइहि रे ॥७॥

---

*हलके

जस मोहिँ समुझि परतु है, तस गोहरावौँ रे ।
सुनै बूझि मन समुझि, तौ पार उतारौ रे ॥८॥
अचरज आवत देखिकै रे, मन मन समुझि रहायो रे ।
मैँ तौ कछु नहिँ जान्यो, गुरू जनायो रे ॥९॥
रहौँ बैठि तहवाँ मैँ, सुरति निहारौँ रे ।
चरन सदा आधार, सीस मैँ वारौँ रे ॥१०॥
जगजीवन के साँईं, तुम सब जान्हु रे ।
दास आपना जानहु, अवर न आनहु रे ॥११॥

(४)

जागहु जागहु अवरन* कुंड, सब पापन के भाजहिँ झुंड॥१॥
जागे ब्रह्मा जागे इन्द्र, सहस कला जागे गोबिंद ॥२।
जागे धरती जगे अकास, सिव जागे बैठे कैलास ॥३॥
तुम जागहु जागे सब कोइ, तीनि लोक उँजियारी होइ ॥४॥
जगजीवन सिष जागे सोइ, चरन सीस धरि रहे हैँ जोइ॥५॥

॥ शब्द ५ ॥

यह मन राखहु चरनन पास । काहे काँ भरमत फिरहु उदास॥१॥
जो यहु मनुवाँ अंतै जाय । राखि लेइ चरनन सिर नाय॥२॥
जो यह मनुवाँ जानै आन । तुम्ह तजि करै न अनत पयान॥३॥
धरती गगन तुम्हार बनाव । चरन सरन मन काँ समुझाव॥४॥
दूजा अवर नहीँ है कोय । जल थल महँ रहि जोति समोय॥५॥
ब्यापि रह्यो है सबहिन माहिँ । अवर दूसरो जानहु नाहिँ॥६॥
न्यारे रहत हैँ संतन माहिँ । संत से न्यारे कबहूँ नाहिँ॥७॥
मोहिँ का परत अहै अस जानि। निर्मल जोति न्यारि निर्बानि॥८
जगजीवन काँ आस तुम्हारी । दाया करि कबहूँ न बिसारी॥९॥

*आवरन ।

॥ शब्द ६ ॥

का तकसीर भई प्रभु मोरी । काहे टूटि जाति है डोरी ॥१॥
तब तुम स.हेब अब तुम जोरी । नाहीं लागु अहै कछु मोरी॥२॥
तुम्ह तेँ कहत अहौं कर जोरी। प्रीति गाँठि कबहूँ नहिँ छोरी॥३॥
नहिँ बसि अहै गुला मन केरी । तुम्ह तेँ काह अहै बरजोरी॥४॥
माथ चरन तर करौं न चोरी । करता तुम्हहीं मोहिँ न खोरी ॥५॥
नैन निरखि छबि देखौं तोरी । आदि अंत दृढ़ राखहु डोरी॥६॥
जगजीवन काँ आसा तोरी। निर्मल जोति तकौं टक* जोरी॥७॥

॥ सावन व हिँडोला ॥

(१)

जबतेँ लगन लगी री, तब तेँ कानि काहू की सखी री॥१॥
मैँ प्यासी अपने पिय केरी, बिन पिय प्यास मिटै न सखी री२
कामिनि दुइ कर धर चरन पर, सीस नवाइ मनावै सखी री॥३
पिय तो गरू गँभीर कहावहिँ, जिय मेँ दरद न आनैँ सखी री४
मान गुमान तज्यो है सखी री, पिय के निकट बसी री सखी री५
पिय का बदन निहारत सुख भा. अनत न चित्त धर्‌यो है सखीरी६
मधुकर पुहुप बास कहँ भैँटै. चाखत सुधि बिसरी री सखी री७
जगजीवन साँइँ की छबिहीं, देखि कै मस्त भई री सखी री८

(२)

असाढ़ आस तजि दीन्हेउ, सावन सत्त बिचार ।
भादौं भरमहिँ त्यागेउ, लियो तत्त निरुवार ॥१॥

*दृष्टि ।

कुँवार कर्म जो लिखि दियो, कातिक करनी होय ।
अगहन अम्मर देखेऊ, जुग जुग जीवै सोइ ॥२॥
पूस परम सुख उपजेऊ, माघै माया त्यागि ।
फागुन फंदा काटेऊ, तब जाग्यो बड़ भागि ॥३॥
चैत चरन चित दीन्हेऊ, बैसाखै बरन बिचार ।
जेठ जीति घर आयेऊ, उतरयो भवजल पार ॥४॥
निर्गुन बारह मासा, संतन करहु बिचार ।
जगजीवन जो बूझही, त्यागहि माया जार ॥५॥

(३)

पपिहै जाय पुकारेऊ, पंछिन आगे रोय ।
तीनि लोक फिरि आयेऊँ, बिनु दुख देख्यो न कोय ॥१॥
जोगिन ह्वै जग ढूँढ़ेऊँ, पहिरयों कुंडल कान ।
पिय का अंत न पायेऊँ, खोजत जनम सिरान ॥२॥
बैठि मैं रहेऊँ पिया सँग, नैनन सुरति निहारि ।
चाँद सुरज दोउ देखेऊँ, नहिँ उनकी अनुहारि* ॥३॥
माया रच्यो हिँडोलना, सब कोइ झूल्यो आय ।
पैंग मार वहि घर गयो, काहू अंत न पाय ॥४॥
बिस्नु औ ब्रह्मा झूलेऊ, झूल्यो आइ महेस ।
मुनि जन इंद्र झूलि सब, झूले गौरि गनेस ॥५॥
सतगुरु सत खंभन गगन, सूरति डोरि लगाय ।
उतरै गिरै न टूटई, झूलहि पैंग बढ़ाय ॥६॥
जगजीवन कहि भाखहो, संतन समझहु ज्ञान ।
गगन लगन लै लावहू, निरखहु छबि निर्बान ॥७॥

---

*बराबर ।

माया बहुत अपर्बल, अलख तुम्हार बनाउ ।
जगजीवन बिनती करै, बहुरि न फेरि झुलाउ ॥८॥

॥ बसंत ॥

॥ १ ॥

मोरे सतगुरु खेलत यह बसंत,
जा की महिमा गावत साध संत ॥टेक॥
कोइ जल माँ रहिगे रैनि गँवाय,
कोइ महि प्रदच्छिना दहिनि लाय ।
कोइ गृह तजि बन माँ किये बास,
बिना नाम सब खूसखास* ॥ १ ॥
कोइ पंच अगिन तपि तन दहाय,
कोइ उर्ध बाहु कर रहे उठाय ।
कोइ निराधार रहि पवन आस,
बिना नाम सब खूसखास ॥ २॥
कोइ दूधाधारी पर घर चित्त,
नग्न रहै कोइ लकड़ी निस्त।
कोइ पावक सूरति करि निवास.
बिना नाम सब खूसखास ॥ ३ ॥
कोइ एक आसन कबहूँ न डोल,
कोइ मवनी ह्वै कबहूँ न बोल ।
कोइ गगन गुफा महँ लिये बास,
बिना नाम सब खूसखास ॥ ४ ॥

* घास फूस ।

कोइ निसु दिन रहिगे झूला झूल,
कोइ स्वाँस बंद करि पकरि मूल ।
जगजीवन एक नाम अधार,
नाम नाव चढ़ उतरे पार ॥ ५ ॥

॥ २ ॥

खेलहु बसंत मन यहि बन माहिं,
अमृत नाम बिसारहु नाहिं ॥ १ ॥
यहि बन का नहिं वार पार ।
आइ के भूलि परा संसार ॥ २ ॥
जिन्ह जिन्ह आइ धरी है देंह ।
दीन्हेव तजि तिन्हहीं सनेह ॥ ३ ॥
वह सुधि डारिन्ह मन बिसराय ।
मैं तैं यह रस बहुत हिताय ॥ ४ ॥
ता तें टूटि गई वह डारि ।
पड़े भवजाल झकोरि झकोरि ॥ ५ ॥
अब मन लीजै तत्त बिचारि ।
गहि रहिय मन नाहिं बिसारि ॥ ६ ॥
रसना रटना रहहु लगाय ।
प्रभु समरथ लेहैं अपनाय ॥ ७ ॥
जगजिवनदास मधुर रस चाखि,
जगत न कहौं सत्त मत भाखि ॥ ८ ॥

॥ ३ ॥

साधो मन महँ करहु बिचार ।
दुइ अच्छर भजि उतरहु पार । १ ॥

पूजा अरचा त्यागि तुम देहु ॥
कर में माला कबहुँ न लेहु ॥ २ ॥
जिभ्या चलै न कहहु पुकारि ।
अस रहि अंतर डोरि सँभारि ॥ ३ ॥
काया भीतर मन लै आउ ।
तीरथ ब्रत कहँ नाहीं धाउ ॥ ४ ॥
दान औ पुन्न जज्ञ महँ नाहिँ ।
सहजहि नाम भजहु मन माहिँ ॥ ५ ॥
दुइ अच्छर समान नहिं कोय ।
बेद पुरान संत कहैं सोय ॥ ६ ॥
मूल मंत्र याहै मत आहि ।
यहि तजि सो भूलहि भव माहिँ ॥ ७ ॥
ज्ञान सब्द तेँ कहौं पुकारि ।
साधो सुनि मन गहहु बिचारि ॥ ८ ॥
जगजीवन सहजहिँ सब मानु ।
मूरति गहि कर अंतर आनु ॥ ९ ॥

॥ ४ ॥

खेलहु मनुवाँ तुम नाम साथ । हित आपन करिहै सनाथ ॥१॥
यहि काया भीतर रहि गाव । बाहर इत उत कहूँ न धाव २
कहि मन परगट देउ लखाव । जग आये का इहै बनाव ॥३॥
तीरथ ब्रत तप नेम अचार । उत्तम सहज राखु बेवहार ॥४॥
सब आसा चित देवहु त्यागि । एक टेक करि रहहु लागि ।५॥
सोवत जागत बिसरैं नाहिं । रमत भ्रमत रहु नामहिँ माहिँ ६
मिलि कै निर्मल होहु निहंग । सुमति सुमन सतगुरु परसंग ७

अम्मर अजर तबै तुम होहु । जो यहु मंत्र तत्त गहि लेहु ८
जगजिवनदास रहु चरन लागि । यह बर सरन लेहु सत माँगि ९

॥ ५ ॥

साधो खेलहु समुझि बिचारि ।
अंतर डोरि गहि रहहु सम्हारि ॥ १ ॥
लोक आइ सब खेल्यो खेल ।
मिलि आसा नहिँ भयो अकेल ॥ २ ॥
हित करि जगत कि रह्यो लोभाय ।
मति पाछिल सब गई हिराय ॥ ३ ॥
फूटि निर्गुन गुन धारिन्ह आनि ।
पर्‍यो मोह मिटि कौल कानि ॥ ४ ॥
लागि और कछु और कमाय ।
बीते समय चले पछिताय ॥ ५ ॥
मुनि सुरपती नाचि बहु भाँति ।
नर बपुरे की काह बिसाति ॥ ६ ॥
देँही धरि धरि नाच्यो राम ।
भक्तन केर सँवार्‍यो काम ॥ ७ ॥
थिर नहिँ कोउ आवत सो जात ।
सुख भा सुधि गै कुबुधि तिरात ॥ ८ ॥
मन मद मातो फिरहि बेहाल ।
अंत भयो धरि खायो काल ॥ ९ ॥
तत्त ज्ञान मन करहु बिचार ।
सुकृत नाम भजु होइ उबार ॥ १० ॥
यह उपदेस देत हौँ सोय ।
देँह धरे कछु दुक्ख न होय ॥ ११ ॥

बेद ग्रंथ ज्ञान लियो छानि ।
चेत सचेत ह्वै लीजै जानि ॥ १२ ॥
जगजीवन कहै परघट ज्ञान ।
उलटि पवन गहि धरि रहु ध्यान ॥ १३ ॥

॥ ६ ॥

नैहर सुख परि नाहिँ भुलाहु ।
मनहिँ बूझि सखि पियहिँ डेराहु ॥ १ ॥
माइ तुम्हारि बहुत सुख खानि ।
इन्ह के गुमान जनि रहहु भुलानि ॥ २ ॥
यहि तुम्ह तेँ पूँछिहिँ नहिँ बात ।
ससुरे चलिहहु मन पछितात ॥ ३ ॥
पितु औ पाँचौ भाइ पियार ।
भौजी सोउ अहैँ हितकार ॥ ४ ॥
इन्ह तेँ कबहुँ न राखेहु रीति ।
सब तजि करि रहु पिय तेँ प्रीति ॥ ५ ॥
सखि पचीस सँग फिरहु उदास ।
एइ तुम्हारि करिहैँ उपहास ॥ ६ ॥
इन्ह के मते चले दुख होय ।
कहौँ सिखाइ मानि ले सोय ॥ ७॥
सासु कहै बहु कैसी आहि ।
ससुर कहै यहु समुझै नाहिँ ॥ ८ ॥
ननद देखि कै रहहि रिसाय ।
तब चलिहहु कर मलि पछिताय ॥ ९ ॥
अब तुम इहै सिखावन लेहु ।
सुमति सो आनि कुमति तजि देहु ॥ १० ॥

जनम धरे का याहै लाह ।
  है सुचित्त रहु चरनन माँह ॥ ११ ॥
जो मन बाहर जाइहि धाय ।
  बिनु जल गहिरे बूड़हि जाय ॥ १२ ॥
परि भवजाल माँ करहि बिगार ।
  मनहिं मारि कै जनम सँवार ॥ १३ ॥
मन यहु साँच झूँठ है सोय ।
  मन का भेद न पावै कोय ॥ १४ ॥
मन के सुख तन का सुख होय ।
  तन छीजे सुख मनहिं न कोय ॥ १५ ॥
मन यहु खात अहै जल पीवै ।
  मन यहु जुग जुग अम्मर जीवै ॥ १६ ॥
मन यहु जीव केरि मनि आहि ।
  मन की मनि मांथ संत लखाहि ॥ १७ ॥
संतन लखि मनि राखि छिपाय ।
  जग सब अंध अंत नहिं पाय ॥ १८ ॥
सो मन त्रिकुटि गगन महँ बास ।
  ज्ञानि तत्त जन करहि बिलास ॥ १९ ॥
सूरति ध्यान करहु यहि भाँति ।
  लखि मूरत छबि सोँ रहु राति* ॥ २० ॥
जगजीवनदास धन्य दै साध ।
  पाइ मता मत भये अगाध ॥ २१ ॥

*राता

॥ ७ ॥

ज्ञान समुझि के करहु बिचार ।
कोउ काहुक नहिं यहि संसार ॥ १ ॥
निर्गुन तें फूटि ब्रह्म यह आय ।
गुन जल बुंद में रहा समाय ॥ २ ॥
लखि माया हित बहुतै लागि ।
वह सुधि गई नाम दियो त्यागि ॥ ३ ॥
उद्र अग्नि महँ रह्यो दस मास ।
जल्यो न गल्यो नाम की आस ॥ ४ ॥
बाहर आनि कै भयो सयान ।
करि मैं तैं जग देखि भुलान ॥ ५ ॥
मातु पिता सुत हित भै नारि ।
चलहि कुचाल कुमंत्र बिचारि ॥ ६ ॥
धन माया सुख रह्यो लपटाय ।
अंत चल्यो कर मलि पछिताय ॥ ७ ॥
जग जड़ मूरुख चेत न आनि ।
संत बचन परमान न मानि ॥ ८ ॥
कहौं सब्द कछु चेतत नाहिं ।
जस जल बुंद हिम जलहिं माहिं ॥९॥
माया जार फँसा सब कोय ।
कवनि जुगति तें न्यारा होय ॥ १० ॥
जगजीवन जे चहै उबार ।
सो प्रभु सुमिरै नाम तुम्हार ॥ ११ ॥

॥ होली ॥

(१)

मनुआँ खेलौ यह होरी, गुरु तेँ रहौ कर जोरी ॥ टेक ॥
पाँच पचीस साँझ माँ करिये, डारि लगावौ पोढ़ी ।
आवौ नाहिँ कतहुं नहिँ धावौ, आपुहिँ देहु न खोरी ॥१॥
जे जे चलि या जग माँ आये, ते ते पड़े झकझोरी ।
बाच्यो नाहिँ काल तेँ कोई, सब के पाँजर तोरी ॥२॥
रहि जुग बाँधि पास नहिँ टरिये, जग माँ जीवन थोरी ।
जुग जुग संग रहेउ साथहि माँ, तबकै अब नहिँ छोरी ॥३॥
निर्गुन निर्मल निर्बान निरखि सत, झरै अमीरस तन
रहि घोरी ।
जगजीवन दे सीस चरन तर, सन्मुख ह्वै नहिँ पाछे मोरी ॥४॥

(२)

खेलु मगन ह्वै होरी, औसर भल पाये ।
साँई समरथ तोहिँ फरमाया, तब यहि जग माँ आये ॥१॥
बिंदम बुंद बनाइ कै जामा, दीन्ह्यो तोहिँ पहिराये ।
सिरिजि कियो दस मास सुद्ध तोहिँ, जरत से लीन्ह बचाये॥२॥
बाहर जब तैँ भयसि, माइ तब दूध पियाये ।
बाल बुद्ध तब रह्यो, जानि कछु नाहीँ पाये ॥३॥
तरुन भयो मद मस्त, कर्म तब बहुत कमाये ।
काम क्रोध लोभ मद तृस्ना, माया मेँ लौ लाये ॥४॥
मैँ तैँ मद परपँच, ताहि तेँ ज्ञान गँवाये ।
साध सँगति नहिँ किये, ज्ञान कछु नाहीँ पाये ॥५॥

गह्यो पचीस तरंग, तीनि तजि चौथे धाये ।
देखि तखत पर पुरुष, ताहि कौं सीस नवाये ॥६॥
फगुआ दरसन माँगि पागि, अंतर धुनि लाये ।
जगजीवन जुग बंध, जुगन जुग ना बिलगाये ॥७॥

(३)

कौनि बिधि खेलौं होरी, यहि बन माँ भुलानी ॥ टेक ॥
जोगिन ह्वै अँग भसम चढ़ायो, तनहिं खाक करि मानी ।
ढुँढ़त ढुँढ़त मैं थकित भई हौं, पिया पीर नहिं जानी ॥१॥
औगुन सब गुन एकौ नाहीं, माँगत ना मैं जानी ।
जगजीवन सखि सुखित होहु तुम, चरनन में लपटानी ॥२॥

(४)

साधो खेलहु फाग, औसर तौ इहै अहै ।
लेहु सँभारि सँवारि कै, तबहिं तौ सुख लहिहै ॥१॥
काया कनक कै नगर बनायो, बहुरि नहीं फिरि बनिहै ।
अब का ख्याल हाल लै लावो, अमर ह्वै जुग जुग जीहै ॥२॥
जे जे आनि जानि जग जागे, से से पार निबहिहैं ।
अहैं अचेत चेत नहिं दुनियहि, ते भवजलहिं समैहैं ॥३॥
तजि कै तीनि चैाथे महँ पहुँचे, आसन दृढ़ करि रहिहैं ।
जगजीवन सतगुरु संगी भे, वे नहिं न्यारे बहिहैं ॥४॥

(५)

मनुआँ खेलहु फाग बचाय ।
डारत फाँसि हाँसि नहिं आवत, देत आहै भरमाय ॥१॥
पाँच लिहे लै लासी कर तें, मारत आहै धाय ।
तिन की चोट खौंटई लागत, गैल चला नहिं जाय ॥२॥

नारि पचीसौ रमत अहैं सँग, लेत अहैं ललचाय ।
ते सब थाँभि बाँधि रस हीं तें, गगन गुफा चढ़ि जाय ॥३॥
निरगुन निरमल साहेब बैठे, निरखि रहै टक लाय ।
जगजीवन तहँ माँगि पागि रस, चरन रहै लपटाय ॥४॥

(६)

पिय सँग खेलौ री होरी ।
हम तुम हिलमिलि करि एक-सँग ह्वै, चलैं गगन की ओरी ॥१॥
पाँच पचीस एक कै राखौ, लै प्रमोधि एक डोरी ।
चली भली बनि आई तहवाँ, पिय तें रहि कर जोरी ॥२॥
निरति निबाह होइहै तबहीं, आपु जानि हैं चेरी ।
सूरति सुरति मिलाय रही तहँ, भींजि सतहिं रस घोरी ॥३॥
तजि गुमान मान बहु बिधि तें, मैं तैं डारी तोरी ।
सुख ह्वैहै दुख मिटिहै तबहीं, नैनन तकि मुख मोरी ॥४॥
सिखर महल में बैठि मगन ह्वै, और जानि सब थोरी ।
जगजीवन जुग बंधि जुगन जुग, प्रीति गाँठि नहिं छोरी ॥५॥

(७)

सखी री खेलहु प्रीति लगाय ।
ह्वै सुचित्त चित्त काँ थिर करि, दीजै सब बिसराय ॥१॥
बैरी बहुत बसत यहि नगरी, डारत अहैं नसाय ।
ऐसी जुगुति बाँधि कै रहिये, करि बस पाँचौ भाय ॥२॥
लेहु बोलाय पचीसौ बहिनी, रहहिं नाहिं बिलगाय ।
तब लै लाय चलो मंडफ काँ, पिय तें मिलिये जाय ॥३॥
गगन मँडफ तहँ नीक सोहावन, देखत बहुत हिताय ।
तहँ सत सेज बैठि रहु सुख तें, जोतिहिं जोति मिलाय ॥४॥

निरखहु जोति रूप वह निर्मल, अनतै दृष्टि न जाय ।
जगजिवनदास भाग तब जागै, नैन दरस रस पाय ॥५॥

(८)

यहि नगरी में होरी खेलौं री ।
हम तें पिय तें भेंट करावौ, तुम्हरे सँग मिलि दौरौं री ॥१॥
नाचौं नाच खोलि परदा मैं, अनत न पीव हँसौं री ।
पीव जीव एकै करि राखौं, सो छबि देखि रसौं री ॥२॥
कतहुँ न बहौं रहौं चरनन ढिग, यहि मन दृढ़ होय कसौं री ।
रहौं निहारत पलक न लावौं, सर्बस श्रौर तजौं री ॥३॥
सदा सोहाग भाग मोरे जागे, सतसँग सुरति बरौं री ।
जगजीवन सखि सुखित जुगन जुग, चरनन सुरति धरौं री ॥४॥

(९)

साधो होरी खेलत बनि आई ।
अजब गावँ यह काया आहै, ता में धूम मचाई ॥१॥
खेलहिं पाँच अपने अपने रस, तेहि काँ तस समुझाई ।
लिहे पचीस सहेली साथहिं, बाहर नहिं बिलगाई ॥२॥
लियो लगाय रसाय डोरि तें, तीनि तजि चैाथे धाई ।
सतगुरु साहेब तहाँ बिराजैं, भेंट कीन्ह तेहिं जाई ॥३॥
जगे भाग तब बड़े हमारे, लीन्ह्यो माँगि रिझाई ।
जगजीवन गुरु चरनन लागे, भल प्रसंग बनि आई ॥४॥

(१०)

मनुआँ खेलहु ख्याल मचाई ।
अजब तमासे अहैं नगर में, देखि न परहु भुलाई ॥१॥
यहि नगरी का तीर थाह नहिं, अंत न केहू पाई ।
ठग श्रौ डाइन बसत ताहि में, तिन हौं की प्रभुताई ॥२॥

सोरह सहस जहँ उठैं तरंगैं पाँच पचीस मग धाई ।
तिन्ह जो जीतै चढ़ै गगन कहँ, तब ह्वै थिर ठहराई ॥३॥
ताहि के संग रंग रस माते, सबै एक रस आई ।
जगजीवन निरगुन गुन मूरति, रहिये सुरति मिलाई ॥४॥

(११)

रहु मन चरनन लाय, खेलौ होरी ।
अवसर इहै बहुरि नहिँ पैहौ, दिह्यो न काहू खोरी* ॥१॥
आये बहुत परे बंधन माँ, सकेयो न फंदा तोरी ।
ऐँचा खैँचा भै सबहिन कै, परिगै झकाझोरी ॥२॥
बचे न कोऊ आय जगत महँ, लियो खाय बिष घोरी ।
लियो बचाय आय सरनागति, पियो अमीरस तोरी† ॥३॥
धागा पाँच पचीस लिये सँग, करहिँ राति दिन सोरी ।
इन तेँ खबरदार ह्वै रहिये, बाँधि लेहु इक डोरी ॥४॥
मैँ मरि‡ जीवत रहहु मरहु नहिँ, तैँ काँ डारहु तोरी ।
चढ़हु पढ़हु सतसंग बास करि, गुरु तैँ रहहु कर जोरी ॥५॥
निर्मल जोति निहारत रहिये, बहुरि होय नहिँ फेरी ।
जगजीवन जग आस तजे रहु, यहि विधि खेलहु होरी ॥६॥

(१२)

काया सहर कहर, कैसे खेलौँ होरी ।
अंत न पावौँ भेद, अहै केतिक मति मोरी ॥१॥
मैँ तौ परिउँ भुलाय, टूटि गै डोरी ।
करौँ अब कौनि उपाय, ताजन सुधि मोरी ॥२॥

*दोष । †घूंट । ‡ "मैँ" को मार कर ।

माया परि जंजाल, कैसे अब छोरी।
आय कौल करि सुद्धि हरी, मैं कीन्ह्यो चोरी ॥३॥
उनके नाहीं लागु, अहै सब हमरी खोरी।
झूठ भरम परि कर्म, औगुन बहु कीन्ह्यो को री॥४॥
आयो रहि निर्बान, यहाँ बिष अमृत घोरी।
अरे मन मुगुध* समुझि, सब जानहु थोरी ॥५॥
यहँ तें उलटि लगाय, डारि दे जग तें तोरी।
कोऊ रहन न पाइ है, लै जैहै बरजोरी ॥६॥
सबै खाक ह्वै जाइ हैं, साँवरि औ गोरी।
मैं तैं पाँच पचीस, बाना† ते सब काँ छोरी ॥७॥
जगजीवन चढ़ि गगन, लाउ लै पोढ़ी।
चरनन सीस राखि, पाछे नहिं हेरी‡ ॥८॥

(१३)

मनुआँ फाग खेलु पहिचानी ॥ टेक ॥
बेद पुरान ग्रन्थ ते सब तें, लीन्ह्यो सारहिं छानी।
सो लै गहहु बहहु नहिं काहूँ, मन बिस्वास करि आनी ॥१॥
सिव ब्रह्मा औ बिस्नु हित लागे, मानि लेहु परमानी।
अस रस पाइ कै भींजि मस्त भे, तिन हीं कह्यो बखानी ॥२॥
मंडफ अजब रात दिन नाहीं, एक जोति निर्बानी।
तेहिं कै दिप्त महा उँजियारा, सब महँ जोति समानी ॥३॥
लेहु माँगि दीन ह्वै बहु बिधि, दाता सतगुरु दानी।
जगजीवन दै सीस चरन तर, अचल अमर ठहरानी ॥४॥

*मूढ़। †भेष, बस्त्र। ‡देखो।

(१४)

यहि जग होरी, अरी मोहिं तें खेलि न जाई ।
साँईं मोहिं बिसराय दियो है, तब तें परयौं भुलाई ॥१॥
सुख परि सुद्धि गई हरि मोरी, चित्त चेत नहिं आई ।
अनहित हित करि जानि बिषै महं, रह्यो ताहि लपटाई ॥२॥
यहि साँचे महँ पाँचौ नाचैं, अपनि अपनि प्रभुताई ।
मैं का करौं मोर बस नाहीं, राखत हैं अरुझाई ॥३॥
गगन मँदिल चलि थिर ह्वै रहिये, तकि छबि छकि निरथाई ।
जगजीवन सखि साँईं समरथ, लेहैं सबै बनाई ॥४॥

(१५)

औसर बहुरि न पैहौ मनुआँ, खेलहु नगरी फाग ।
काया कनक अनूप बनी है, सुकृत नाम अनुराग ॥१॥
सात दीप नौ खंड पिर्थवी, सात समुद्र समाग ।
तोहिं भीतर तीरथ अनेक हैं, सोवत कस नहिं जाग ॥२॥
तजि दे पाँच पचीस औ तीनिउ, चौथे के पथ* लाग ।
दरस देख तहँ जाय पुरुष का, निरखि नीर रस पाग ॥३॥
झलकत रूप अनूप तहँ निर्मल, गहु ऐसो बैराग ।
ब्रह्मा बिस्नु सिव का मन तेहि माँ, सो गुरु जान सत भाग ॥४॥
जगजीवन निर्वान ध्यान करु, जक्त धंध सब त्यागु ।
अमर अजर अचल जुग जुग होइ, सीस चरन बर माँगु ॥५॥

(१६)

अरी मैं खेलौं रि फाग ।
दृढ़ कै डोरी पोढ़ि कै राखौं, गावौं मैं सुर राग ॥१॥

*पथ, राह ।

मँदिल सोहावन नीक बना सखि निसु बासर तैं जाग ।
लै लावो जहँ पीव बसतु हैं, सकल भरमना त्याग ॥२॥
निरखेहु निरति सो रूप कहौ मोहिं, इहै मंत्र अनुराग ।
देखि दरस रस बस छबि मोही, दुइ कर जोरि कै माँग ॥३॥
पाँच पचीस सुरति सँग तोरे, करि बस मन तैं पाग ।
जगजीवन सखि सीस चरन धरु, जानहु आपन भाग ॥४॥

(१७)

मगन ह्वै खेल री होरी ॥ टेक ॥
यहि नैहर सुख परि नहिं भूलहु, फेरि नाहिं केहु
दीन्ह्यो खोरी ॥१॥
पाँच भाय रस भंग करतु हैं, इन बस परिय कठोरी ॥२॥
लेवौ लाइ पचीस इक संगहिं, एक लाय लै नाहीं छोरी ॥३॥
मैं तैं त्यागु गुमान न करु कछु, गगन अटारी चढ़ु पिय
डोरी ॥४॥
रहि सतसंग सुरति सुख बिलसहु, लज्जा कानि त्यागु
सब बौरी ॥५॥
जगजीवन सखि कबहुँ न छूटै, जुग जुग प्रीति लागि
रहै पोढ़ी ॥६॥

(१८)

सखी री मैं केहि विधि मन समुझावौं ॥ टेक ॥
गुन विहून मैं जोगिनि बौरी, बहु विधि भेष बनावौं ॥१॥
सकल जहान मैं भ्रमत फिरत हौं, पिय का अंत न पावौं ॥२॥
जगजीवन सखि निरखि परखि कै, वह छबि नहिं
बिसरावौं ॥३॥

(१९)

नैन निरखि छबि देखि होरी खेलौ री ।
मैं बौरी ब्याकुल भइउँ, ढूँढ़त भेंट करन के हेत ॥१॥
काह कहौं कहि आवत नाहीं, अपरम्पार अलेख ।
तीनि लोक भूमि भसम चढ़ायो, करि जोगिन को भेख ॥२॥
कनक नगर सिरसंग महल में, बिनु उँजियारे सेत ।
लोक कानि मरजाद त्यागि सखि, हम तुम मिलिय समेत ३
लै कै पाँच नाचु होरी गहि, तजि कै कपट कि रेख ।
लाय साज लेहु सँग अपने, मानि लेहु सत एक ॥४॥
करि तहँ बास पास हौं छबि पर, रबि ससि वारू अनेक ।
जगजीवन मूरति दरसन रस, पीवत होत सँतोख ॥५॥

(२०)

होरी खेलौ संत चरन सँग, मगन रहौ रस रंग ।
काया मढ़ी गढ़ी है साँईं, रह्यो ब्यापि सब अंग ॥१॥
रहि तजि तीनि बसौ चौथे महँ, कबहुँ न ह्वै चित भंग ।
निरमल नीर बिहून रूप छबि, निरखि वारि ससि भानु अनंग* ॥२॥
ब्रह्मा बिस्नु सिव को मन एकै, ह्वै कै ताहि मिलै सतसंग ।
वाही लाय खेल खेलत है, करि करि नेग† तरंग ॥३॥
चमकत सो निरबान अमूरति, छकित भयो मन बोधि उमंग ।
जगजीवन बैठे तेहिं छाया, भे निरबान बिहंग ॥४॥

*कामदेव । †अनेक ।

(२१)

अरी ए मैं तो बैरागिन, होरी कैसे खेलौं री ॥ टेक ॥
ढूँढ़त फिरौं कहुँ अंत न पावौं, कैसे कै धीर धरौं री ॥१॥
समुझि बूझि पछिताय रहिउँ मैं, का सौं भेद कहौं री ॥२॥
आपु चढ़े सिरसंग अटरिया, अब मैं धाइ चढ़ौं री ॥३॥
जगजीवन ऐसे साँईं के, चरनन सीस धरौं री ॥४॥

(२२)

कैसे फाग खेलौं यहि नगरी ।
काया नगर के अंत खोज नहिं, भटकत भ्रमत फिरौं री ॥१॥
नगरी नौ खिरकी फिरकी नहिं, धुआँधार बरसौ री ।
तेहिं की छाँह फिरौं बौरानी, मोहिं न सूझि परौ री ॥२॥
फिरत पाँच वै दंडी बैरी, कल न करैं सकुचौं री ।
निसु बासर मोरे पिंड पड़तु हैं, गई सुधि सब बिसरी री ॥३॥
तिन्ह की नारि रमहिं पचीस सँग, अचलनि बहुत करहिं री ।
समुझाये समुझत कछु नाहीं, सबै बिगार करहिं री ॥४॥
सोरह से तहँ फिरैं फिरंगिनि, कूप चौरासी गुन गहिरी री ।
तेहि करार बसि और बतावहिं, तीनिउ लोक ठगी री ॥५॥
मैं मतंग तैं तोरि मिताई, हम तुम समत करी री ।
होइ एक मिलि चलिये वहँ जहँ, सत पिउ संग बरी री ॥६॥
सब ले तयागि पयान गगन तकि, जहँ रबि ससि दिप्त हरी री ।
जगजीवन सखि हिलि मिलि करि कै, सूरति छबिहिं गही री ॥७॥

(२३)

दुनियाँ जग धंध बँधा इक डोरी ।
कोनिउ नाहिं उपाय, सकै कोइ नाहीं छोरी ॥१॥

सत्त सुकृत बहु नाम, रहै गहि अंतर चोरी ।
याहे अहै उपाय, लीन्ह तिन आपुहिँ छोरी ।२॥
सबै आपुनी लागु, देइ को केहि काँ खोरी ।
अमृत रसना तजै, खाइ रहि बिष माँ घोरी ॥३॥
ताहि तैँ सूझत नाहिँ, बुद्धि भै तेहि तैँ थोरी ।
मैँ तैँ गर्ब गुमान, जात सो नाहीँ तोरी ॥४॥
अंत गये बिनसाय, भये हैँ खाक कि ढेरी ।
अंत चले पछिताय, केहू नहिँ काहु बहोरी ॥५॥
काल तेँ सो बचि रह्यो, जो गुरु तेँ रहि कर जोरी ।
जगजीवन गहि चरन, करी निजु सूरत पोढ़ी ॥६॥

(२४)

अरी ए नैहर डर लागै, सखी री कैसे खेलौँ मैँ होरी ।
औगुन बहुत नाहिँ गुन एकौ, कैसे गहौँ दृढ़ डोरी ॥१॥
केहिँ काँ दोस मैँ देउँ सखी री, सबै आपनी खोरी ।
मैं तो सुमारग चला चहत हौँ, मैँ तैँ बिष माँ घोरी ॥२॥
सदा पाँच परिपंच मेँ डारत, इन तेँ बस नहिँ मोरी ।
नाहिँ पचीस एक सँग आवत, धरत मोहिँ कहि मोरी ॥३
समत होहि तब चढ़ौँ गगन गढ़, पिय तैँ मिलौँ कर जोरी
भीजौँ नैनन चाखि दरस रस, प्रीति गाँठि नहिँ छोरी ॥४
रहौँ सीस दै सदा चरन तर, होउँ ताहि की चेरी ।
जगजीवन सत सेज सूति रहि, और बात सब थोरी ॥५॥

(२५)

पिय तें रहु लौ लाय, सुनहु सखि मोरी ॥ टेक ॥
कहौं साँची समुझाय, करौं नहिं चोरी ।
लोक लाज कुल कानि त्यागि, प्रीति नहिं तोरी ॥१॥
मैं तैं सखि दे त्यागि, सचेत हो बौरी ।
पाँच प्रपंचहिं त्यागि, डारि दहु सब अरुझोरी ॥२॥
करि पचीस बहु रंग, खेलन चहहिं होरी ।
एइ सब रसहिं रसाय, बाँधि लै एकहिं डोरी ॥३॥
चढ़ि गढ़ गगन टक लाय, मगन रहु जोगी ।
जगजीवन सत सेज सूति, जुग जुग नहिं केरी ॥४॥

(२६)

सतगुरु साहेब समरथ, सुनु अरज हमारी ।
आदि अंत का आहु मैं, कबहूं न बिसारी ॥१॥
केतेउ गुनहगार पापी, तेहिं लीन्ह्यो तारी ।
जब दाया तुम कियो, तब निरखि निहारी ॥२॥
एक जोति एक ह्वै, तिन रूप निहारी ।
सुमिरत ब्रह्मा बिस्नु, सिव लाये तारी ॥३॥
जल थल घट घट सर्ब माँ, है जोति तुम्हारी ।
जगजीवन तेहिं चरन की, जाऊँ बलिहारी ॥४॥

(२७)

रहु मारग ताके, होरी खेलु जगत माँ आन ॥ टेक ॥
यह होरी नित बरत जहाँ तहँ, सुरति तैं करु पहिचान ।
दृष्टिहिं दृष्टि मिलाय रहो तहं, मिथ्या जगतहिं जान ॥१॥
सँगई भँवरिया देत हिये की, सो सखि चतुर सुजान ।
अजर अमर बर पाय मगन ह्वै, रहहु चरन लपटान ॥२॥

ते खेलहिं अपने पिय के सँग, छाँड़ि लाज औ कान ।
बहुतक फिरहिं गरब की माती, खोजत पुरुष बिगान* ॥३॥
इन बातन कछु भल है नाहीं, समुझौ अपने ज्ञान ।
जगजीवन बिस्वास आनि मन, चीन्हहु पुरुष पुरान ॥४॥

(२८)

मैं तो परिउँ भुलाइ, काहि सँग खेलौं होरी ।
ढुँढ़त ढुँढ़त मैं थकित भई हौं, कस पिय की अनुहारी† ॥१॥
नींद न आवै सुख नहिं मोहिं काँ, ढूँढ़ि मुइउँ बन भारी ।
कहँ धौं अहैं देखि मैं पावौं, तन मन देहौं वारी ॥२॥
निरति सुरति काँ कहि समझावै, सुन ले बचन हमारी ।
हम तुम मिलि कै चली गगन कहँ सुख होइहि अधिकारी ॥३॥
पाँच पचीस लाय इक रस तैं, एकौ रहै न न्यारी ।
गगन मगन साँईं रँग रातैा, दीजै सबै बिसारी ॥४॥
रहि सतसंग बाँधि जुग जुक्तिहिं, निरखत रहि अनुहारी ।
जगजीवन सखि चरन सीस दै, दुनियाँ धंध बिसारी ॥५॥

(२९)

या बन में मन खेलत होरी ॥ टेक ॥
सील सिया रस रंग राम है, लछमन सँग लिये जोरी ॥१॥
नर सो पाँच पचीसौ नारी, त्रिमति तैं धूम मच्यो री॥२॥
जगजीवन छबि निरखि निरति से, चरनन सीस धरो री॥३

---

*दूसरे का । †सूरत, रूप ।

मिश्रित अंग

॥ शब्द १ ॥

यहि नगरी महँ आनि हिरानी ॥टेक॥
गली गली महँ चलत फिरत रहि, अंत नहीं मैं जानी।
जब मैं आइउँ कोउ सँग साथ न, इहवाँ भइउँ बिरानी ॥१॥
सोई समुझि जन्म पाइ जग, मूल बस्तु नहिं जानी।
बड़े भाग तैं पाइ देह नर, सुधि गै भूलि परिउँ भव आनी २
देखत खात पियत गाफिल मन, सुख आनंद बहुत हरषानी।
डोलत बोलत चलत अपथ पथ, भरे मद अंध गुमानी ॥३॥
मैं तैं मारि सँभारि न आवै, अघ कर्म हित करि बहुत कमानी।
तेहि परि हरिगै सुधि बुधि सब कर, पग थाके जब फिर पछितानी ॥४॥
साधो साधि सुरति दृढ़ करिये, रहि रसि बसि छबि अंतर जानी।
जगजीवन ते जग तैं न्यारे, गुरु के चरन तजि और न जानी ॥५

॥ शब्द २ ॥

सुनु बिनु कृपा भक्त न होइ।
नाहीं अहै काहु के बस में, चहै मन महँ कोइ ॥१॥
तिरथ ब्रत तप दान पुन्नं, होम जज्ञं सोइ।
बैठि आसन मारि जंगल, तेहु भक्त न होइ ॥२॥
ज्ञान कथि कबि पढ़ै पंडित, डारि तन मन खोइ।
नहीं अजपा जाप अंतर, भरम भूले रोइ ॥३॥
दियो दुइ अच्छर भइ दाया, गहा दृढ़ मत टोइ।
जगजिवन बिस्वास बस जन, चरन रहे समोइ ॥४॥

॥ शब्द ३ ॥

आय के झगरा लायो रे ॥ टेक ॥

जहँ तें चलि एहि जग कहँ आयो, वह सुधि मन तें
त्याग्यो रे ॥ १ ॥

सतगुरु साहेब कान लागि मोरे, मैं सोवत उठि जाग्यो रे॥२॥

भयौं सचेत हेत हित लाग्यो, सत दरसन रस पाग्यो रे ॥३॥

जगजीवन बर नाम पाइ कै, चरन कमल अनुराग्यो रे॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

चरनन तर दियो माथ, करिये अब मोहिं सनाथ,
दास करिकै जानी ।

बूड़ा सब जग्त सार, सूझै नहिं वार पार,
देखि नैनन बूझिय हित आनी ॥

सुमति मोहिं काँ देउ सिखाय, आनि मैल रहि लोभाय,
बुद्धिहीन भजन हीन, सुद्धि नाहिं आनी ।

सहस फन तें सेस गावै, संकर तेहिं ध्यान लावै,
ब्रह्मा बेद प्रगट कहै बानी ॥

कहौं का कहि जात नाहिं, जोतो वा सर्ब माहिं,
जगजीवन दरस चहै, दीजै बरदानी ।

॥ शब्द ५ ॥

कहाँ गयो मुरली को बजैया, कहाँ गयो रे ॥टेक॥

एक समय जब मुरली बजायो, सब सुनि मोहि रह्यो रे ।

जिन के भाग भये पूर्बज* के, ते वहि संग रह्यो रे॥१॥

---

*पूर्ब जन्म ।

खबरि न कोई केहु की पाई, को धौं कहाँ गयो रे ।
ऐसे करता हरता येहि जग, तेऊ थिर न रह्यो रे ॥२॥
रे नर बौरे तैं कितान है, केहि गनती माँ है रे ।
जगजीवनदास गुमान करहु नहिं, सत्त नाम गहि रहु रे ॥३॥

॥ शब्द ६ ॥

तुम तें कहत अहौं सुनाय ।
चरन परि कै करौं बिनती, लेहु प्रभु जो बनाय ॥१॥
भान गन ससि तीनि चारिउ, लिये छिनहिं बनाय ।
आनि इच्छा भई ऐसी, बिलँब नाहीं लाय ॥२॥
महा अपरबल अहै माया, दियो सब छिटकाय ।
जहाँ जैसी तहाँ तैसी, दियो धंधे लाय ॥३॥
पाय रस तरु रंग राते, लागि कर्म कमाय ।
ताहि के बस कर्म परि कै, मिले तेहि माँ जाय ॥ ४ ॥
डारि दीन्ह्यो जक्त फाँसी, खैंचि नाच नचाय ।
बिना सतगुरु पार नाहीं, फेरि फिरि डहकाय* ॥ ५ ॥
लियो लाइ लगाय चित्तहिं, मंत्र दीन्ह सिखाय ।
नाम गहि रहे जक्त न्यारे, भक्त सोइ कहाय ॥ ६ ॥
साधु ऐसे अहैं जग यहि, काहु नहिं गति पाय ।
जगजीवन वै अमरगढ़ में, बैठि थिर ह्वै जायँ ॥ ७ ॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो नाम भजहु मन माहिं ।
दुइ अच्छर रसना रट लावहु, परगट भाखहु नाहिं ॥ १ ॥

---

*धोखा खाना ।

करि के जुक्ति रहहु जग न्यारे, रहि के जक्तहिं माहिँ ।
जैसे जल महँ रहै जल-कुकुरी*, पंख लिप्त जल नाहिँ ॥ २ ॥
भव का सागर कठिन है साधो, तीर थाह कछु नाहिँ ।
सुगति नावँ† के बेड़ा‡ चढ़ि कै, तेई पार तरि जाहिँ ॥ ३ ॥
गुप्त प्रगट सत मंतर आहै, समुझहु आपुहि माहिँ ।
जगजीवन गुरु मूरत निरखहु, सीस चरन तेहिँ माहिँ ॥ ४ ॥

॥ शब्द ८ ॥

साधो नाम बिसरि नहिँ जाई ।
सोवत जागत बैठे ठाढ़े, अंतर गुप्त छपाई ॥ १ ॥
सेस सहस मुख नामहिँ बरनत, संकर तेउ लव लाई ।
ब्रह्मा चारिउ बेद बखानत, नामहिँ की प्रभुताई ॥ २ ॥
नेगन§ पतित तरे यहि नाम तेँ, सकै कौन गति गाई ।
तीरथ बरत तपस्या करि कै, बड़े भाग जिन्ह पाई ॥ ३ ॥
नामहिँ गहहु रहहु दुनिया में, गहे रहहु दिनताई ।
जगजीवन जग जनम देँह धरि, होइहि तबहि बड़ाई ॥ ४ ॥

॥ शब्द ९ ॥

मन तन काँ खाक जानु, चित्त रहु लगाई ॥ टेक ॥
निर्गुन तेँ फूटि छूटि, टूटि नाहिँ जाई ।
सुधि सँभारि उलटि निरखि, छोड़ि देहु गफिलाई ॥ १ ॥
पुरइन पात नीर जैसे, रहु ऐसे ठहराई ।
बास जक्त रहि निरास, निरखहु निरथाई ॥ २ ॥
कंज बास बिगासित मधुकर, मनि जोति मिली आई ।
संपुट करि बाँधि प्रीति, उड़न नाहिँ पाई ॥ ३ ॥

---

*मुरग़ाबी । †नाव । ‡किश्ती । §अनेक ।

ऐसी यह जुक्ति भक्त, जक्त माँ रहाई ।
जगजीवन बिस्वास करि कै, चरन गुरु लपटाई ॥ ४ ॥

॥ शब्द १० ॥

मनुआँ तैं कहुं अनत न जाई ।
गगन गुफा सतगुरु कै मूरति, तहाँ रहौ लौ लाई ॥ १ ॥
है माया बिस्तार ताहि का, अंत न काहू पाई ।
वहि घर तें निरमल चलि आयो, इहवाँ गयो भुलाई ॥ २ ॥
कोई तपस्या दान पुन्न करै, कोइ कोइ तिरथ नहाई ।
कोई पखान बखान करत रहै, याही गये भुलाई ॥ ३ ॥
नाम नाहिं अंतर महँ चीन्है, बहुत कहै बकताई ।
जगजीवन निरमल मूरति तें, रहौ एक टक लाई ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

अब मन बैठि रहु चौगान ।
महा अपरबल अहै माया, अनत करु न पयान ॥ १ ॥
गये बाहर जाहुगे बहि, भूलि है बहु ज्ञान ।
मंत्र मत कहि देत आहौं, मानि ले परमान ॥ २ ॥
पवन पानी नाहिं तहवाँ, नाहिं ससि गम भान ।
नाहिं सुधि बुधि सुःख दुःखं, सत्त दिष्टि निसान ॥ ३ ॥
निरखु निरमल लाइ इक टक, निर्गुनं निर्बान ।
जगजिवन गुरु बाँधि रहु जुग, (तहँ) चरन हीं लपटान ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

साधो को मूरख समुझावे ।
सूकर स्वान बृषभ* खरकी बुधि, सोई वहि काँ आवे ॥१॥

*बैल, साँड़ ।

बहु बकबाद बिबाद करहिँ हठ, करहिँ जो मन माँ भावै।
बेद गरंथ अनन्त कहँ निंदत, औरहिँ ज्ञान सिखावै ॥२॥
बहु अहंकार क्रोध छिम नाहीं, नाहक जीव सतावै।
इतने पाप परै दुख तिन कहँ, सुख नहिँ कबहूँ पावै ॥३॥
परैँ अघोर नर्क ते प्रानी, नाम न सुपनेहुँ आवै।
जगजीवन जे जे ऐसे हहिँ, बिरथा जन्म गँवावै ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

मूरख बड़ा कहावै ज्ञानी।
सब्द संत का मानै नाहीं, अपने मन की ठानी ॥१॥
भक्त काँ देखि चलहि सुमारग, भजन नाहिँ मन आनी।
कहहि कि हम समान नहिँ कोई, बूड़े ते अभिमानी ॥ २ ॥
कबहुँ के चुटकी देहि भिखारी, कहहि कि हम बड़ दानी।
हम जोगी हम ध्यानी आहैँ, हम हन आगम-जानी ॥३॥
ऐसे बहुतक आहहिँ एहि जग, परहिँ नरक ते प्रानी।
जगजीवन वै न्यारे सब तेँ, सूरति मुरति समानी ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

कलि को देखि परखि मैं जानी।
मातु पिता काँ दे दुख बहु बिधि, कछु मन दरद न आनी १
देखा नैनन सो कहि भाषौं, लिया बिबेक करि छानी।
सुत परबीन कहावत बहुतै, पितहिँ कहै अज्ञानी ॥२॥
पकड़ि टाँग घिसियावहिँ मारहिँ, तजहिँ धरम की कानी।
जीवत जैसे धरत हैँ हाड़ा, मुए देत हैँ पानी ॥३॥
रहे इक भक्ति अचार बिचारे, पंडित बचन प्रमानी।
देहिँ पिंड बहु प्रीति भाव करि, अस सरा धनहिँ मानी ॥४॥

बिप्रन कहँ पकवान खवावहिं, भात बरा तिथि मानी ।
आजा बाप कै नाम पुकारहिं, खाइ के पेट अघानी ॥५॥
बहुतन के जग ऐसे पच्छन*, होवै जेहिं जस ठानी ।
पड़े अघोर नर्क माँ सोई, जिन अस कीन्हो प्रानी ॥६॥
त्यागै कुमति सुमति मन गहि रहि, बोल सदा सुभ बानी ।
जगजीवन तेहिं हित प्रभु मानत, कबहुँ न अंतर आनी॥७॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो नहिं कोइ भरम भुलाई ।
कहे देत हौं प्रगट पुकारे, राखौं नाहिं छिपाई ॥१॥
नाम अच्छर दुइ तत्त सार है, भजै सोई चित लाई ।
यहि सम मंत्र और है नाहीं, देख्यो ज्ञान थहाई ॥ २ ॥
रटै सो अंतर गुप्त रहै जग, काहु न देइ जनाई ।
अपने भाय सुभाय रमत रहै, चित्त न अनते जाई ॥३॥
सिखि पढ़ि फूलि भूलिगे बहुतै, करै बिबाद अधिकाई ।
अस कलि-भक्त पुजावे खातिर, परहिं नरक महँ जाई ॥४॥
बहुतक पंडित सब्दी ज्ञानी, जहँ तहँ आपु पुजाई ।
भजहिं न नाम रंग नहिं रातहिं, कहि औरन समुझाई ॥५॥
भेख अलेख कहा मैं बखानौं, मैं तैं कै प्रभुताई ।
त्यागिन्ह ध्यान अपथ पथ धावहिं, लागे कर्म कमाई ॥६॥
जानि कै कानि त्याग दइ सोई, लागि करै कुटिलाई ।
ताहि पाप संताप भया तेहिं, गयो है सबै नसाई ॥७॥
सब संसार अहै सब ऐसै, काहुहिं चेत न आई ।
महा अपरबल माया बस परि, डारि दियो भरमाई ॥८॥

---

*हठ, टेक ।

कोइ कोइ उबरे गुरु किरपा तेँ, जुक्ति भाग तेँ पाई ।
जगजीवन गृह ग्राम भवन सम, चग्न रहे लपटाई ॥९॥

॥ शब्द १६ ॥

साधो मैँ ज्ञान सोँ तत्त बिचारी ।
जो बूझै तौ सूझि अंध भा, जानिकै भयो अनारी ॥१॥
तीन लोक तीनिउ जब कीन्हेउ, चैाथो साजि सँवारी ।
ताहि मद्ध रबि ससिगन तारे, को करि सकै बिचारी ॥२॥
आहि को कौन कौन सबहीं महँ, नाहिँ पुरुष नहिँ नारी ।
बासन नाँव धरा सबही केहु, वह तो सब तेँ न्यारी ॥३॥
फूटि निर्गुन तेँ आयो ब्रह्मंडहि, गुन धरि भटका मारी ।
बासन बुन्द ब्रह्म वह एकै, कहत हैँ न्यारी न्यारी ॥४॥
भूला सब प्रकृती सुभाव तेँ, नाहीँ सुद्धि सँभारी ।
जगजीवन कोइ उलटि पवन कहँ, गहि गुरु चरन निहारी ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

पंडित काह करै पँडिताई ।
त्याग दे बहुत पढ़ब पोथी का, नाम जपहु चित लाई ॥१॥
यह तो चार बिचार जगत का, कहे देत गोहराई ।
सुनि जो करै तरै पै छिन महँ, जेहिँ प्रतीति मन आई ॥२॥
पढ़ब पढ़ाउब बेधत नाहीँ, थकि दिन रैन गँवाई ।
एहि तेँ भक्ति होत है नाहीँ, परगट कहौँ सुनाई ॥३॥
सत्त कहत हैाँ बुरा न मानौ, अजपा जपै जो जाई ।
जगजीवन सत मत तब पावै, उग्र ज्ञान अधिकाई ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

ए प्रभु मैं कछु जानि न पायो ।
इहाँ तो पठयो मोहिं कौलि करि, वह सुधि मैं बिसरायो ॥१॥
अब सुधि भई चेत जब दीन्ह्यो, चित्त चरन तें लायो ।
मैं को आहुँ अहहु सब तुमहीं, तुमहीं कारन लायो ॥२॥
अब निर्बाह हाथ है तुम्हरे, मैं नहिं लखा लखायो ।
बहा जात रह्यौं अपथ पंथ महँ, सरन खींच ले आयो ॥३॥
अब अरदास सुनहु एह मोरी, तुम समरत्थ कहायो ।
जगजीवन दास तुम्हार कहावै, अनत न कतहुँ बहायो ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

अब मन भयो है मस्तान ।
धन्य साधू रहहि साधे, गहहि करि पहिचान ॥ १ ॥
सीस दीन्ह्यो चरन परिया, करहि सोइ बयान ।
सब्द साँची कहत भाषे, मानु सुनि परमान ॥२॥
तकत नैनन निरखि निर्गुन, रहत ताहि समान ।
नाहिं टूटत नाहिं छूटत, भरम तजि दृढ़ आन ॥३॥
अजब सतगुरु दिये जेहिं गुन, नाहिं तेहि सम आन ।
जगजीवन सो भयो पूरा, कहत बेद पुरान ॥४॥

॥ शब्द २० ॥

जब तें देखि भा मस्तान ।
रोम रोमं छकित ह्वैगा, करै कौन बखान ॥१॥
जैसे गूँगा खाइ गुड़ को, करै कवन बयान ।
जानि सोई मानि सोई, ताहि तस परमान ॥२॥

नाहिँ तन की सुद्धि आहै, भूलिगा बहु ज्ञान ।
गुरू की निर्बान मूरति, ताहि माहिँ समान ॥३॥
सीस लाग्यो चरन महियाँ, सदा है गलतान ।
जगजिवनदास निरास आसा, सतसँग नहिँ बिलगान ॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

साँईं काहु के बस नहिँ होई ।
जाहि जनावै सोई जानै, तेहि तें सुमिरन होई ॥१॥
आपुहिँ सिखत सिखावत आपुहिँ, आपुहिँ जानत सोई ।
आपुहिँ बरतं बिदित करावत, आपुहिँ डारत खोई ॥२॥
आपुहिँ मूरुष आपुहिँ ज्ञानी, सब महँ रह्यो समोई ।
आपुहिँ जोति अहै निर्बानी, आपु कहावत वोई ॥३॥
संत सिखाइ कै ध्यान बतायो, न्यारा कबहुँ न होई ।
जगजीवन बिस्वास बास करि, निरखत निर्मल सोई ॥४॥

॥ शब्द २२ ॥

साधो कठिन जोग है करना ।
जानत भेद बेद कछु नाहीं, नाहक बकि बकि मरना ॥१॥
द्वादस आँगुर पवन चलतु है, नाहिँ सिमटि घर औना ।
ना थिर रहहि न हटका मानै, पलक पलक उठि धैाना ॥२॥
दुइ आँगुर मोताज* रहै, तब करै एक सी गैाना ।
तहाँ अमूरति संग बसेरा, तेहि का होइ खिलैाना ॥३॥
रहि तेहिँ साथ सनाथ करै सो, रमत रहै तेहिँ भैाना† ।
जगजीवन सतगुरु कै मूरति, निरखैा निर्मल ऐना ॥४॥

---

* नाप । † घर ।

॥ शब्द २३ ॥

साधो कासी अजब बनाई ।
साँई समरथ सब रचि लीन्ह्यो, धोखा सबहिँ दिखाई ॥१॥
काया कनक बनायो पल मैं, तेहि का अंत न पाई ।
है घट हीं केहु सूझा नाहीं, अंतहिँ अंत बताई ॥२॥
सात दीप नौखंड पिर्थवी, सिद्धन इहै लखाई ।
सात समुद्र कि लहरि तरंगैं, पंछी पानि न पाई ॥३॥
पंछी उड़ा गयो ऊपर काँ, पानि पानि धुनि लाई ।
पायो पानी बुन्द चोंच ते, तिरपति प्यास न जाई ॥४॥
बैठा डार बिचार करै तहँ, तकि थिर सुधि बिसराई ।
जगजीवन अस जानि लियो जिन्ह, तिन्ह काँ जोग दृढ़ाई ॥५॥

॥ शब्द २४ ॥

साधो भले अहैं मतवारे ।
कुत्ते पाँच किये बसि डोरी, एकौ रहत न न्यारे ॥१॥
कुत्ती पचीस ताहि सँग लागीं, ताहि संग अधिकारे ।
सबै बटोरि एक माँ बाँध्यो, साधे रहहिँ सँभारे ॥२॥
सो लै जाय गये मंडफ कहँ, जोगी आसन मारे ।
भे गुरुमुखी ताहि ढिँग बैठे, महा दिप्त उँजियारे ॥३॥
पीवत अमी अमर ते जुग जुग, रहत हैं जुगुत बिचारे ।
जगजीवनदास अचल ते साधू, नाहिँ टरत हैं टारे ॥४॥

॥ शब्द २५ ॥

बपुरा का गुनि गुनि कोउ गावै ।
जा की अपरम्पार अहै गति, अंत न कोऊ पावै ॥१॥

सेस सारदा ब्रह्मा सुमिरत, संकर ध्यान लगावै ।
बिनती बिस्नु करहिं कर जोरे, सूरति सुरति मिलावै ॥२॥
माया प्रबल बिस्तार दियो है, सब काँ नाच नचावै ।
न्यारा न्यारा नाम धरे काँ, आपु नहीं जग आवै ॥३॥
है बनाव कछु अजब तमासा, रंग में रंग मिलावै ।
जानि परत पहिचान होत तब, चरन सरन ले लावै ॥४॥
सतगुरु साहेब जब तुम सिखवा, सिखि तब परगट गावै ।
जगजीवन है चरनन लागा, अब तुम्ह नहिं बिसरावै ॥५॥

॥ शब्द २६ ॥

मन तैं पियत पिये नहिं जाना ।
पीयत रहेसि आइ मद मातेसि, अब कस भइसि हेवाना ॥१॥
पाँच पचीस अहैं सँग बासी, ते तो हहिं गैबाना* ।
बाँधु पोढ़ि कै साधि सुरत तें, करु तैं गगन पयाना ॥२॥
रहु ठहराइ बहहु नहिं कतहूँ, गुरु निरखहु निर्बाना ।
जगजीवनदास सदा सतसंगी, चरन रहो लपटाना ॥३॥

॥ शब्द २७ ॥

अब मन रहहु थिर ठहराइ ।
पदुम पात्रं जैसे नीरं, नाहिं बाहर जाइ ॥१॥
अहै मता गँभीर यह तो, गुरू दीन्ह बताइ ।
रहहु लागे पागि तेहि तें, परहु ना बौराइ ॥२॥
आइ जे जे बसे यहि जग, पियो रस हित लाइ ।
माति केते सोइगे हैं, गुफा गये भुलाइ ॥३॥

*छिपे हुए ।

जागि चौंकि के खैंचि लीन्ह्यो, सरन पहुँचे जाइ ।
जगजीवन निर्बान सतगुरु, मिले तेहिं लपटाइ ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

एहु मन खोट छोट न होइ ।
जात पल छिन धाइ जहँ तहँ, नाहिं मानत सोइ ॥१॥
जहाँ बहु हित नीक लागत, बिलम तँहवाँ होइ ।
त्यागि मूरति भूलि सूरति, देत ध्यान बिगोइ ॥२॥
मैं न मरत तें पहिरि धागा, मातु गर्भ सोइ ।
सयन* साथहिं लिहे पाछे, नाहिं जाने कोइ ॥३॥
मरे मंत्र तें धुआँ लागे, जाय बरतन खोइ ।
जगजिवन निर्गुन देखि निर्मल, रह्यो ताहि समोइ ४ ॥

॥ शब्द २९ ॥

साधो नाम तें रहु लै। लाइ । प्रगट न काहू कहहु सुनाइ ॥१॥
झूठे परगट कहत पुकारि । तातें सुमिरन जात बिगारि ॥२॥
भजन बेलि जात कुम्हिलाइ । कौनि जुक्तिके भक्ति दृढ़ाइ ॥ ३ ॥
सिखि पढ़ि जोरि कहै बहु ज्ञान । सो तै। नाहिं अहै परमान ४
प्रीति रीति रसना रहै गाय । सो तै। राम काँ बहुत हिताय ॥ ५॥
सो तै। मोर कहावत दास । सदा बसत हैाँ तिन के पास ॥६॥
मैं मरि मन को रहे हैं सँघारि† । दिप्त जोति तिन के उँजियारि७
जगजीवनदास भक्त भे सोइ । तिन का आवा गमन न होइ ८

॥ शब्द ३० ॥

साँइं अब मोहिं दाया कीजे ।
औगुन कर्म गुनाह मेटिये, सरन राखि मोहिं लीजे ॥ १ ॥

*फ़ौज । †मार डालना

सुरति सुमन सुभाव सुसीतल, सुधि किरपा करि दीजे।
बिसरहि नाहिं चरन मन मो तें, मन रस अमृत पीजे ॥२॥
झलमल निरखि परखि आमूरति, चुवै चमकि रस भींजे।
लीन्हे रहु बिस्वास गहि थाती*, जनम जनम नहिं छीजे ॥३॥
आवा गवन तवन थिर करिये, काल कँटक मिटि जीजे।
जगजीवन चल सदा संत कहँ, अहै काल का कीजे ॥४॥

॥ शब्द ३१ ॥

यहु मन नाहिं इत उत जाय ॥टेक॥
कृपा तें जब होइ थिर यहु, रहै दृढ़ता लाय ॥ १ ॥
बहुत खोजी खोज कीन्हे, दीन्ह केहु लखाय ॥ २ ॥
जिन्ह लखा तिन्ह लखा, नाहीं परत नीचे आय ॥ ३ ॥
पाइ करतं करत है उहँ, रहत नाहीं पाय ॥४॥
लीन्ह खैंचि कै ऐंचि सरनं, देत नाहिं बहाय ॥ ५ ॥
जगजीवन गुरु किये दाया, नाहिं तजि बिलगाय ॥ ६ ॥

॥ शब्द ३२ ॥

साधो मन भजहु सच्चा नाम।
झूठि दुनियाँ झूठि माया, परि झूठे धन धाम ॥ १ ॥
झूठि सगत जगत की, परपंच काम हराम।
परपंच पारस भजन बिगरत, होत नहिं सिध काम ॥ २ ॥
पाँच और पचीस गहि, नित नेम करि संग्राम।
जगजिवनदास गुरु चरन गहि, सत सूकृतं धन धाम ॥३॥

॥ शब्द ३३ ॥

साँईं तुम समरत्थ हमारे।
हम तो तुम्हरे दास कहावत, हमहिं न रहहु बिसारे ॥ १॥

* पूंजी

जो बिस्वास किहे रहे मन तेँ, तिन्ह के काज सँवारे ।
जिन जाना अपने मन नाहीँ, तिन्हैँ भरम तुम डारे ॥ २ ॥
जहँ जहँ भक्त को गाढ़ पस्यो है, तहँ तहँ तुरत सिधारे ।
सुखी कीन्ह बिलम नहिँ लाये, तुरतहिँ कष्ट निवारे ॥३॥
बहुत निवाजा* कहँ लग गाजोँ, बेद पुरान पुकारे ।
जगजिवन को चरन तुम्हारे, सो अवलम्ब† हमारे ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३४ ॥

साधो गहहु समुझि बिचारि ॥ टेक ॥
करै कोउ बिबाद निंदा, जाहु तेहिँ तेँ हारि ।
मगन रहहू लगन लाये, डारि मैँ तैँ मारि ॥ १ ॥
पाँच एइ तो पचीस हहिँ, ते देत अहहिँ बिगारि ।
रहहु सीतल दीनता ह्वै, डोरि सुरति संभारि ॥ २ ॥
है अनूपं गगनगढ़ तहँ, रहहु आसन मारि ।
जगजीवनदास जोति निर्मल, देखि देखि निहारि ॥ ३ ॥

॥ शब्द ३५ ॥

साँईं गति जानि जात न कोइ ॥ टेक ॥
कृपा करहु जेहिँ जानि आपन, भजन तेहि तेँ होइ ।
देखत नैनन सुनत सरवन, आवत अचरज सोइ ॥ १ ॥
तत्त सार बिसारि दीन्ह्यो, डारिन्हि सर्बस खोइ ।
भूला सब पाखंड महँ हित, रहे मैँ तैँ समोइ ॥ २ ॥
करत जानि बिबाद जहँ तहँ, परे भ्रम महँ सोइ ।
ब्रत भंग करि हठ मान मारहिँ, भक्त एहि नहिँ होइ ॥ ३

*बख़्शिश की । †सहारा ।

इस उत्त पुजाइबे कहँ, नाहिँ हम सम कोइ ।
निंदहिँ साध के सब्द काटहिँ, जनम सूकर होइ ॥ ४ ॥
रहै मन मरि मारि जग महँ, दुक्ख नहिँ केहु देइ ।
कोमल बानी रहै सीतल, भक्त तबहीँ होइ ॥ ५ ॥
रहै लागी जाहि की जहँ, तहाँ तेहिँ का सोइ ।
बसत है सब आपु जल थल, नाहिँ दूजा कोइ ॥ ६ ॥
ध्यान धरु मन जानि अंतर, चरन गहि रहु टोइ ।
जगजिवनदास के तुमहिँ साहेब, चहौ करहु सोइ होइ ॥ ७ ॥

॥ शब्द ३६ ॥

साधो अंतर सुमिरत रहिये ।
सत्तनाम धुनि लाये रहिये, भेद न काहू कहिये ॥१॥
रहिये जगत जगत तेँ न्यारे, दृढ़ ह्वै सूरति गहिये ।
कर्म भर्म का होइ बिनासा, सत समरथ कहँ पइये ॥२॥
निंदा बादी बहुतक आहैँ, एइ सब दूरि बहैये ।
इन तेँ खबरदार नित रहिये, सुमति सुमारग चलिये ॥३॥
जो जस करहि सो तैसे पाइहि, सब्द पुकारे कहिये ।
जगजीवन बिस्वास किहे रहु, सूरति चरन मिलैये ॥४॥

॥ शब्द ३७ ॥

साधो भक्त जक्त तेँ न्यारा ।
उलटि दृष्टि दीन्ह चरनन तेँ, बास किहे संसारा ॥१॥
भ्रमत फिरहिँ निसि दिन दुनिया महँ, कीन्हे रहत बिचारा ।
अलख सरूप लखै कोउ नाहीँ, है गति अगम अपारा ॥२॥

तेहि कहँ मम कहि जे नर जानहिं, ते बूड़े मँझ धारा ।
परैं अघोर नर्क ते प्रानी, नाहीं होइ उबारा ॥३॥
धन्य भक्त यहि जुक्ति रहैं जे, देखि जे कहहिं लबारा ।
जगजीवन रस मस सत माते, तकत रहे निरंकारा ॥४॥

॥ शब्द ३८ ॥

साधहिं अबल न जानै कोई ।
जो कोउ मन महँ अबल बूझिहै, नर्क परै ते सोई ॥१॥
नाम अमल रस चाखि मस्त भे, ते नाहीं नर लोई ।
वै वाही तेँ सुरति लाये, उनहिं जानु ये वोई ॥२॥
साध सेस पुहमी सिर लीन्हे, नाहिं दुचित्ते होई ।
रावन मारै की उपाइ कह, सायर बाँध्यो सोई ॥३॥
जिन्ह केहु साध क हीनै जाना, ते ते गये बिगोई ।
जुग जुग सदा अहै सँग बासी, बिलग न जानै कोई ॥४॥
चरनन सीस रहत है दीन्हे, निर्मल जोति समोई ।
जगजीवन मरि भे अम्मर जो, रहत देखि जम रोई ॥५॥

॥ शब्द ३९ ॥

साधो ज्ञान कथी कथि हारे ।
जा को वार पार नाहीं है, जानै कौन बिचारे ॥१॥
नानक कबीर नामदेव पीपा, सब हरि के हित प्यारे ।
जे जे वह रस पाइ मस्त भे, ते सब कुल उँजियारे ॥२॥
बरनत सेस सहसमुख जिभ्या, कीरति नाम पुकारे ।
नाम भरोस भयो है जिन के, ते बहुतेरे तारे ॥३॥
संकर बिस्नु ताहि मन सुमिरत, ब्रह्मा बेद पुकारे ।
निरगुन जोति अहै निरबानी, माया किहे बिस्तारे ॥४॥

जिन्ह काहू पर भई है दाया, राहन जगत बिसारे ।
जगजीवन सतगुरु के चरनन, निरखि सीस रहि वारे ॥५॥

॥ शब्द ४० ॥

नाम की को करि सके बड़ाई ।
जेइ जस माना तेइ तस जाना, भाग बड़े ते पाई ॥१।
नामहिँ तेँ बल भयो है सेसहिँ, पृथवी भार उठाई ।
सदा मगन मस्तान रहत है, कबहुँ नाहिँ गरुआई ॥२॥
हनूमान लछिमन औ भारत, नामहिँ के प्रभुताई ।
बिस्नु बिरंचि सिव नामहिँ तेँ अस, केउ न सके गति गाई ३
चारिहु जुग महँ नामहिँ तेँ अस, अब सो सब्द बताई ।
साधो सत्तनाम है साँचा, मन भजु तजि गफिलाई ॥४॥
नामहिँ सब जल थल महँ ब्यापित, दूसर कहिय न जाई ।
जगजीवन सतगुरु के चरन गहि, सत्तनाम लौ लाई ॥५॥

॥ शब्द ४१॥

नहिँ भरमावहु बारम्बार ।
बहुत दुख मन समुझि आवत, करत अहौं बिचार ॥१॥
कठिन सागर अहे नौका, कैसे उतरौं पार ।
चरन की मैँ रहौं सरनन, तुमहिँ खेवनहार ॥२॥
चहहु करहू होय सोई, कौन बरजनहार ।
अहहु बड़े समर्थ साहेब, सर्ब सकल पसार ॥३॥
कर्म भर्म अघ मेटि कै, जन जानिये हितकार ।
जगजीवन निरखाइये, मैँ अहौं निरखनहार ॥४॥

॥ शब्द ४२ ॥

तुमहीं सों चित लागु है, जीवन कछु नाहीं ।
मात पिता सुत बंधवा, कोउ संग न जाहीं ॥१॥
सिद्धि साध मुनि गंध्रबा, मिलि माटी माहीं ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस्वरा, गनि आवत नाहीं ॥२॥
नर केतानि को बापुरा, केहि लेखे माहीं ।
जगजीवन बिनती करै, रहै तुम्हरी बाँहीं ॥३॥

॥ शब्द ४३ ॥

प्रभु जी कहौं मैं कर जोरि ।
मैं तौ दास तुम्हार आहौं, सुरति दृढ़ करु मोरि ॥१॥
इत उत कतहूँ चलै नाहीं, रहै लागी डोरि ।
पास दासहिं राखु अपने, कौन सकि है तोरि ॥२॥
रह्यो चित्त समोइ सत महँ, भई दाया तोरि ।
रूप सोइ अनूप मूरति, रह्यो नैना हेरि ॥३॥
देखि छबि कहि जात नाहीं, सुरत सत भइ चेरि ।
जगजीवन बिस्वास करि कहु, अगम गति तेहिं फेरि ॥४॥

॥ शब्द ४४ ॥

साँईं तुम ब्रत पालनहारे ।
जे जे आस तुम्हारी राखे, तिनहिं न रहहु बिसारे ॥१॥
बहुतक दुष्ट अहहिं परपंचा, डारत अहैं बिगारे ।
बिगरत नाहिं बनाय लेत सो, राखत सदा सँवारे ॥२॥
भाव नाहिं मन महँ लै आवत, बचन कठोर पुकारे ।
बंदा कैसे करै बंदगी, मोह फाँस मैं डारे ॥३॥

जे जे भक्त होत सब आये, तिन्हैं न राखहु न्यारे ।
जगजीवन के इतनी बिनती, सतगुरु सरन तुम्हारे ॥४॥

॥ शब्द ४५ ॥

प्रभु जी जन काँ जानत रहिये ।
जो जस जानै तेहिं तस जानहु, कबहुँ न दूर बहैये ॥१॥
जो कोउ सरन तिहारी आवै, तेहि का ब्रत निरबहिये ।
तेहि काँ सुख आनंद तें राखहु, आपहु सुख तब लहिये ।२।
नैन निकट है बास तुम्हारो, दूर कहाँ कँह कहिये ।
परगट अहौ ब्यापि रहे जल थल, मिलि रहि ज्ञान तें कहिये॥३॥
चरन सीस दै कहौं कर जोरे, सूरति सुरति मिलइये ।
जगजीवन के सतगुरु पूरे, तुम तें काह छिपैये ॥४॥

॥ शब्द ४६ ॥

यहँ कोइ काहु क नाहीं, समुझहु मन माहीं रे ॥टेक॥
झूठै जानि परत अहै, यह है परछाहीं रे ।
जबहिं महूरत आइहै, जहँ तहाँ बिलाहीं रे ॥१॥
काया टाटी है सबहिं की, बटोही सब माहीं रे ।
बटोही जहँ तहँ जाहिंगे, सब खाक मिलाहीं रे ॥२॥
मोर तोर जग कहत है, बहु गर्ब गुमाना रे ।
सबै खाक मिलि जाइ हैं, रहै नाम निदाना रे ॥३॥
सब्द पुकारे कहत हौं, सुनि करु परमाना रे ।
जगजीवन सतनाम गहि, चरनन लपटाना रे ॥४॥

॥ शब्द ४७ ॥

साधौ जिन्ह प्रभु सबहिं बनाय ।
मानि ले आकीन मनुवाँ, सत्तनाम लै लाय ॥१॥

चाँद सूरज कियो तारा, गगन लियो बनाय ।
थाम्ह थूनी बिना देखौ, राखि लियो ठहराय ॥२॥
पवन पानी जल थलं महँ, रही जोति समाय ।
जानि ऐसो परत आहै, नाहिँ कहुँ बिलगाय ॥३॥
चौथ तीनिउ कोटि तीरथ, रम्यो दीन्ह जनाय ।
ऐसन साँई बिसारि कै तैं, नाहिँ भरम भुलाय ॥४॥
गहौ अंतर डोरि दृढ़ ह्वै, कबहुं ना बिसराय ।
जगजीवन बिस्वास कै गुरु, चरन रहौ लपटाय ॥५॥

॥ शब्द ४८ ॥

अब मन नाहिँ कतहूँ जाय ।
काया भीतर बनो मंदिर, सत्य नाम लै गाय ॥१॥
बद्रीनाथ केदार मथुरा, द्वारिका बनवाय ।
अवध बेनी प्राग उत्तम, गया काँ जब धाय ॥२॥
लेत करवत जाइ कासी, जैसि जेहि रुचि आय ।
अहै अदेख केहु नाहिँ देखा, कवन फल दहुँ पाय ॥३॥
जगन्नाथ जत नाइ कै जग, बौध बैठे जाय ।
पास संतन के बिराजहि, नहिँ केहू गति पाय ॥४॥
जोति निर्मल अहै एकै, जहँ तहँ रहा छिपाय ।
जगजीवन बिस्वास करि, गुरु चरन रहे लपटाय ॥५॥

॥ शब्द ४९ ॥

जग दै पीठ दृष्टि वहि लाव ।
करि रहु बास पास उनहीं के, अनत न कतहूँ चित्त बहाव ॥१॥

धौं ।

जैसी प्रीति चकोर कि ससि तैं, पलक न टारत इकटक लाव।
ऐसी रहै रात दिन लागी, दुबिधा कबहूँ ना लै आव ॥२॥
लोक बड़ाई कीरति सोभा, गुन औगुन बिसराव।
सीतल दीन सदा ह्वै रहिये, दुनियाँ धंध बहाव ॥३॥
परपंची पाँचौ नित नाचहिँ, इन को है अरुझाव।
छूटत नाहिँ पड़े सब फाँसी, करि को सकै उपाव ॥४॥
सतगुरु चरन सरन जे रहिगे, तिन्ह का भयो बचाव।
जगजीवन सो न्यारे जग तैं, सुभ सधि भयो बनाव ॥५॥

॥ शब्द ५० ॥

तुम तैं करै कौन बयान।
रह्यौ सब महँ ब्यापि जल थल, दूसरो नहिँ आन ॥१॥
ख्याल हाल अपार लीला, कहा बरनै ज्ञान।
कियो किरपा छिनहिँ माँ जेहिँ, भयो अंतरध्यान ॥२॥
सेस सम्भू बिस्नु ब्रह्मा, नाम सत्त बखान।
लागि डोरी जोति की वहि, नाहिँ कोइ बिलगान ॥३॥
सदा यहि सतसंग बासा, कियो अब पहिचान।
जगजिवन गुरु के चरन परि कै, निरखि तकि निरबान ॥४॥

॥ शब्द ५१ ॥

दुनियाँ रोइ रोइ गोहरावै।
साँईं छाँड़ि दीन्ह तुम रच्छा, जिय माँ दरद न आवै ॥ १ ॥
बेअकीन आहै सब दुनियाँ, बहु अपकर्म कमावै।
तेहि तैं दुखित भई सब दुनियाँ, नीचे नीर बहावै ॥२॥
जानत है घट घट कै बासी, को कहि के गोहरावै।
कपटी कुटिल हीन बहु बिधि तैं, तुम तैं कौन छिपावै ॥३॥

मैं का बिनय करौं गुरु तुम तें, करहु सो तस मन भावे ।
जगजीवन के साँईं समरथ, सीस चरन तर नावे ॥४॥

॥ शब्द ५२ ॥

साँईं निर्मल जोति तुम्हारी ।
आयो दृष्टि जबै जिन्ह देखा, किरपा भई तुम्हारी ॥१॥
तीरथ ब्रत औ दान पुन्न करि, करि कै तपस्या हारी ।
जब करि थक्यौ सक्यौ नहिँ एकौ, नाहिँ मिटी अँधियारी ॥२॥
जेहिँ बिस्वास बढ़ाय दियो जस, सो तस भा अधिकारी ।
तैसे रूप अनूप सँवार्‌यौ, तेइ तस लायौ तारी ॥३॥
जोगी जती सिद्ध साधन घट, जहँ जस तहँ तस वारी ।
जगजीवन सतगुरु साहेब की, सूरति की बलिहारी ॥४॥

॥ शब्द ५३ ॥

साधो एक जोति सब माहीं ।
अपने मन बिचारि करि देखो, और दूसरो नाहीं ॥१॥
एक रुधिर इक काया आहै, बिप्र सूद्र कोउ नाहीं ।
कोउ कहै नर कोऊ कहै नारी, गैबी पूरुष आहीं ॥२॥
कहुँ गुरु ह्वै कै मंत्र सिखावै, कहुँ चेला ह्वै स्रवन सुनाही ।
कतहूँ चेत हेत की बातैं, कतहूँ भ्रमै भुलाही ॥३॥
कहुँ निरबान ध्यान महँ लाग्यो, कतहूँ कर्म कमाही ।
जो जस चहै चलै तेहि मारग, तेहिँ के सतगुरु आहीं ॥४॥
सब्द पुकारि प्रगट ह्वै भाषौं, अंतर राखौं नाहीं ।
जगजीवन जोती वह निर्मल, बिरले तिन की छाहीं ॥५॥

॥ शब्द ५४ ॥

साधो जानि कै होइ अजाना ।
रहै गुप्त अंतर धुनि लाये, तिन हीं तो कछु जाना ॥१॥
तजि चतुराई कपट रीति मन, दूसर नाहीं जाना ।
एक तें टेक लगाय रहे हैं, दूसर नाहीं आना ॥२॥
मान गुमान दूरि करि डारयो, दिनताई हिये आना ।
सब्द कुसब्द केतौ कोउ बोलै, सब कै करि सनमाना ॥३॥
हारि रहै जीतै नहिं केहु तें, भयो सिद्ध निमाना ।
जगजीवन सतगुरु की किरपा, चरन कमल धरि ध्याना ॥४॥

॥ शब्द ५५ ॥

ऐसे साँईं की मैं बलिहरियाँ री ।
ए सखि संग रंग रस मातिउँ, देखि रहिउँ अनुहरियाँ री ॥१॥
गगन भवन माँ मगन भइउँ मैं, बिनु दीपक उजियरियाँ री ।
झलकि चमकि तहँ रूप बिराजै, मिटिगै सकल अँधेरियाँ री ॥२॥
काह कहौं कहिबे की नाहीं, लागि जाहि मन महियाँ री ।
जगजीवन वह जोती निरमल, मोती हीरा वारियाँ री ॥३॥

॥ शब्द ५६ ॥

हम कहँ दुनियाँ कहि समुझावै ।
जानि बूझि कै करै सयानी*, तेहि तें पार न पावै॥ १ ॥
सीतल ह्वै कै नवै आइ कै, बहु बिधि भाव सुनावै ।
निंदा करै फेरि बहु बिधि तें, राम कानि नहिं आवै ॥ २ ॥
कोउ कहै भिच्छुक कोउ कहै भगली, अपकीरति गोहरावै ।
देखत राम सुनत है कानन, तकि तेहिं तस पहुँचावै ॥ ३ ॥

*चालाकी ।

कहत अहै सब्द यह साँचा, करै जाय तस पावै ।
जगजीवन के साँईं समरथ, सीस चरन तर नावै ॥ ४ ॥

॥ शब्द ५७ ॥

नाम बिना गे जन्म गँवाय ।
भजबैं होय भजहु नर प्रानी, कहत सब्द गोहराय ॥ १ ॥
रावन कौरो कंस औ कच्छप, तेऊ गये बिलाय ।
गर्ब गुमान किहिनि दुइ दिन का, अंत चले पछिताय ॥ २ ॥
अंध धुंध मा बाप रुवै* रे, बहुरि नहीं अस अवसर पाय ।
जगजीवन यह भक्ति अचल है, जुग जुग संतन कीरति गाय ३

॥ शब्द ५८ ॥

बूसी† राजा बूसी राव, बूसी का है सबै बनाव ॥ १ ॥
बूसी राजा राज करावै, बूसी दर दर भीख मँगावै ।
बूसी तेनी भये अमीर बिन बूसी के भये फकीर ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

बादसाह बूसीहिं तें, बूसिहिं सब संसार ।
जगजीवन बूसी नहीं, जिनके नाम अधार ॥ ३ ॥
बूसी राजा बूसी परजा, बूसी क अहै पसार ।
जगजीवन के बूसी नाहीं, केवल नाम अधार ॥ ४ ॥

॥ शब्द ५९ ॥

साँईं अब मैं काह कहौं ।
जानत तुमहिं जनावत तुमहीं, राखहु तैसे रहौं ॥ १ ॥

*रोवै । †भूसी या तुस ।

जल थल जीव जंतु नर नारी, मारग चलै जो चहै ।
पूजत कहूँ पुजावत काहू, सुमन कहूँ अभाव कहैं* ॥२॥
कहुँ दुख दारिद दरद निर्दया, सुख धन धाम लहै ।
काहूँ कुमति सुमति जड़ मूरुख, काहूँ ज्ञान गहै ॥३॥
काहूँ पंडित खंडित कबितं, बहु बातैं चुप्प अहै ।
काहूँ दुष्ट कुटिल कुकरमी, कहुँ सुभ है निबहै ॥४॥
कहुँ दाता कहुँ कृपिन कीट सम, कहुँ थिर जात बहै ।
अस नाचत सब नाच नचावत, जहँ जस तैसे अहै ॥५॥
कहैं कर जोरि मोरि यह सुनिये, चरन कि सरनहिं रहैं ।
जगजीवन गति अगम तुम्हारी, दासन दास अहैं ॥६॥

॥ शब्द ६० ॥

साधो देखत नैनन साँई ।
अस कोउ अपने मनहिं न बूझै, पैसौ कौनिउ नाहीं† ॥१॥
सुनत स्रवन पपील‡ की बानी, तिन तें का गोहराई ।
अस मन मुगुध अहै मद माता, करत अहै चतुराई ॥२॥
धरती गगन भानु ससि तारा, छिन महँ लियो बनाई ।
निर्मल जोति बहुत बिस्तारा, जहाँ तहाँ छिटकाई ॥३॥
पवन में पवन पानि महँ पानी, दूजा रंग बनाई ।
अगिन में अगिन बास महँ बासा, अस मिल ना बहराई ॥४॥
भा जहँ जैसे करी बंदगी, जोति मैं जोति मिलाई ।
जगजीवन ऐसे सतगुरु के, चरनन की बलि जाई ॥५॥

*कहीं अच्छा भाव और कहीं बुरा भाव । †ऐसा कोई न समझे कि कोई मालिक मौजूद नहीं है । ‡चींटी ।

॥ शब्द ६१ ॥

साधो को कहि काहि सुनावै ।
आपुहिँ कहत सुनत है आपुहिँ, सब घट नाच नचावै ॥१॥
ज्ञानी आपु आपु है ध्यानी, आपुहिँ मंत्र सिखावै ।
आपुहिँ परगट सबहिँ दिखावत, आपुहिँ गुप्त छपावै ॥२॥
देखत निरखत परखत आपुहिँ, निरमल जोति कहावै ।
जेहि काँ चहै खैँच लै राखै, काहुइँ दूरि बहावै ॥३॥
जोगी आपु आपु रस-भोगी, आपुहिँ भोग लगावै ।
आपु लच्छमी परसत आपुहिँ, आपुहिँ आपु सो पावै ॥४॥
लिप्त नाहिँ आलिप्त रहत है, ज्यौँ रबि जोति समावै ।
जगजिवनदास भक्त है आपुहिँ, कहै सो जस मन भावै ॥५॥

॥ शब्द ६२ ॥

साधो अब मैँ ज्ञान बिचारा ।
निरगुन निराकार निरबानी, तिन्ह का सकल पसारा ॥१॥
काया धरि धरि नाचत आहै, बझे करम के जारा ।
बिनु सत डोरी जोग नहिँ छूटै, कैसे होवै न्यारा ॥२॥
कृपा कीन्ह जेहिँ सुद्धि सम्हाख्यो, उलटि कै दृष्टि निहारा ।
सब संसार चित्त तेँ बिसरे, पहुँचे सो दरबारा ॥३॥
निरगुन अहि गुन धख्यो आइ कै, राम भयो संसारा ।
जगजीवन गहि नाम उतरि गे, सतगुरु चरन अधारा ॥४॥

॥ शब्द ६३ ॥

दीनता सम और कछु नाहीँ, तजि दे गर्ब गुमान ।
रह्यो दीन अधीन ह्वै कै, सो सब के मन मान ॥१॥

दीन तेँ कंचन कोटि भयो है, कहे देत हौँ ज्ञान ।
गर्ब गुमान कीन जब रावन, मारि कियो घमसान ॥२॥
बिभीखन जब दीन भयो है, ताहि कियो परधान ।
दीन समान और कछु नाहीँ, गावत बेद पुरान ॥३॥
रहे अधीन नामहीँ गहि कै, पंडो भे बलवान ।
कौरौ दीन तेँ प्रभुता पायो, गर्ब तेँ खाक समान ॥४॥
दीन तेँ कंस महा बल भयऊ, तबहिँ गर्ब मन आन ।
केस पकरि कै तिन काँ मार्यो, सो सब के मन मान ॥५॥
हिरनाकच्छप दीन भयो जब, दीन्ह्यो सब बरदान ।
जब अहंकार कीन भक्तन तेँ, मार्यो कृपा-निधान ॥६॥
होहु दीन हंकार करै जो, सो अंतर पछितान ।
राजा रंक छत्रपति दुनियाँ, गनौँ कौन केतान ॥७॥
दौलत धाम औ माया पायो, बार बार चित तेँ बिलगान ।
जगजिवनदास नाम भजु अंतर, चरन कमल धरि ध्यान ॥८॥

॥ शब्द ६४ ॥

साधो रटत रटत रट लाई ।
अमृत नाम रहो रस चाखत, हिय माँ ज्ञान समाई ॥१॥
मधुर मधुर चढ़ि चल ऊँचे काँ, फिर नीचे काँ आई ।
फिर ऊँचे चढ़ि थिर ठहराना, पास बास भे जाई ॥२॥
छूट्यो नाम मुकाम भयो दृढ़, निर्गुन जोति तहँ छाई ।
जगजीवन परगास उदित है, कछु गति कही न जाई ॥३॥

॥ शब्द ६५ ॥

साधो जग की कौन बिचारै ।
उत्तम होय रती भरि काहू, सो कहि बहुत पुकारै ॥१॥

जो मध्यम करतब्य कर्म करि, सो मनहीं मैं बिचारै ।
परगट कहे असोभा मानै, रामहिँ कहि कै अभारै* ॥२॥
करत है राम जबून भला, हम बपुरा कौन सँवारै ।
अस नर नारी देखि परत हैं, सुमति हिये तेँ डारे ॥३॥
जो उपदेस बेद पढ़ि देवै, समुझाये नहिँ हारै ।
सुमति न आनै नाम न जानै, मैं ममता नहिँ मारै ॥४॥
बेधत नहिँ अनबेधा सब है, सुनि सूरति न सम्हारै ।
जगजीवन साधू अस जग महँ, दरसन नैन निहारै ॥५॥

॥ शब्द ६६ ॥

साधो जग की कहौं बखानी ।
जेहि तेँ जाइ होइ कहँ तेहि तेँ, कहहिँ लाभ काँ हानी॥१॥
खल† तेँ प्रीत महा हित मानहिँ, संत देखि अभिमानी ।
कुटिल कि अस्तुति बहुते बिधि तेँ, भक्त कि निंदा टानी॥२॥
भक्तन कहैं कि महा अबल हैं, हम हैं बहु बलवानी ।
दाता जिन्हैं अदत्त‡ कहैं तेहिँ, हम तेँ कोऊ न दानी ॥३॥
जानत अहैं कुकर्म करत हैं, गे ज्योँ धूर उड़ानी ।
जगजीवन मन चरन कमल महँ, निरखत निर्मल बानी ॥४॥

॥ शब्द ६७ ॥

जो पै भक्ति कीन्ह जो चहै ।
अजपा जपत रहै निसु बासर, भेद प्रगट नहिं कहै ॥१॥
जगत भाव सुभाव देखि चलि, गुप्तहिँ अंतर रहै ।
ऐसी प्रीति रीति मन लावै, सुख आनँद तब लहै ॥२॥

---

*हलका होय अर्थात संतोष करै । †दुष्ट । ‡सूम ।

बहु अचार नहिँ करै डिंभ कछु, सहजै रहनी रहै ।
मुसलमान जे भये औलिया, लाइ भोग कव रहै ॥३॥
अंतर माँ अंतर कछु नाहीँ, पाइ भाेग सो रहै ।
बंदा खात खात सो साँई, दूसरि गति को कहै ॥४॥
देत अहौं उपदेस कहे मैं, जो वहि नामहिँ चहै ।
जगजीवन वै साहब हूँगे, सदा मस्त जो रहै ॥५॥

॥ शब्द ६८ ॥

मोहिँ न जानि परत गति तोरी, केतिक मति साँईं है मोरी १
महा अपरबल माया तोरी, अब दृढ़ करिये सूरति मोरी २
करहु कृपा तुम दास कै जानी, हित करि लै भव बंधन छोरी ३
चरनन लागि रहै चित मोरा, जानि दास प्रभु मोहिँ तन हेरी ४
जगजीवन अरदास* सुनावै, छवि देखत रहुँ कबहुं न तोरी† ५

॥ शब्द ६९ ॥

अब मैं कहौं का गति तोरि ।
चहौ सो करहु होइ पै सोई, है केतान मति मोरि ॥१॥
चाँद सुरजगन गगन तीनि महँ, सब नाचत एक डोरि ।
एत‡ बिस्तार पसार अंत नहिँ, लाइ एक तेँ जोरि ॥२॥
काहूँ कुमति सुमति परमारथ, कहुँ बिष अमृत घोरि ।
कहुँ हूै साह सूम हूै बैठत, कहूँ करत है चोरि ॥३॥
कहुं तप तीरथ बरत जोग करि, कहुँ बंधन कहुं छोरि ।
कहूँ पराक§ कहै कछु नाहीँ, कहूँ कहै मारि मोरि ॥४॥
छूछे भरे अहौ सब तुमहीँ, देइ कौन को खोरि ।
जगजीवन काँ सरनै राखहु, चरन न टूटै डोरि ॥५॥

---

*अरज़ी । †न टूटै । ‡इतना । §बैराग ।

॥ शब्द ७० ॥

कलि महँ कठिन बिबादो भाई ।
कानि संत की मानत नाहीं, मन आवै तस गाई ॥१॥
सुधि नाहीं कछु आगिल पाछिल, औरहिं कहै चेताई ।
भ्रमत फिरहि दुनियाँ के धंधे, जोरि गाँठि बकताई ॥२॥
देखि सिखहि सो करहि जाइ कै, नाम तें प्रीति न लाई ।
ऐसी रीति भाव करि भूले, परे नरक महँ जाई ॥३॥
कहुँ विद्या पढ़ि सब्द साखी, जहाँ तहाँ गोहराई ।
दाम काम रस बस निसु बासर, रचि बहु भेष बनाई ॥४॥
करि कै स्वाँग पुजावहिँ सब तें, नहि बिबेक करि जाई ।
बिज्ञानी ज्ञानी कबिता भे, नाम दीन्ह बिसराई ॥५॥
परिहैं महा मोह की फाँसी, छोरि तोरि नहिँ जाई ।
ज्यों बंसी गहि मीन लीन भे, मारि काल लै खाई ॥६॥
सहजहिँ अजपा जपै निरंतर, भेद न कहै सुनाई ।
जगजीवन गुरुमुख सत सन्मुख, चरन गहौ लिपटाई ॥७॥

॥ शब्द ७१ ॥

बरनि न आवै मोहिँ, राम नाम पर वारी ।
सेस सारदा संकर बरनत, केतिक बुद्धि हमारी ॥१॥
सुनियत बेद गिरंथ पुकारत, जिन मति जान बिचारी ।
निरगुन निरबान रहत हौ न्यारे, माया जगत पसारी ॥२॥
तीनि लोक महँ छाय रही है, को करि सकै बिचारी ।
दियो जनाइ जाहि काँ जैसे, तेइ तस डोरि संभारी ॥३॥
बैठि जाय चैागान चैाक महँ, दृढ़ ह्वै आसन मारी ।
जगजीवन सतगुरु दाया त, निरखि परखि नीहारी ॥४॥

॥ शब्द ७२ ॥

साँईं अजब तुम्हारी माया ॥टेक॥
सुर नर मुनि सब थकित भये हैं, काहू अंत न पाया ॥१॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस सेस सब, सतो सारदा गाया ॥२॥
सब परवास* निरंतर खेलहिं, जहँ जस तहाँ समाया ॥३॥
पानी नीर पहिरि सो जामा, तहँ का नाम धराया ॥४॥
रबि अस्थूल अहै निरबानी, किरिन सो जोति बढ़ाया ॥५॥
जगजीवन जस जानि परा है, उलटि के ध्यान लगाया ॥६॥

॥ शब्द ७३ ॥

प्रभु मैं का प्रतीत लै आवौं ।
जो उपदेस दियो मोरे मन काँ, सोई मंत्र मैं गावौं ॥१॥
बिद्या मोहिं पढ़ाय सिखायो, सो पढ़ि जगहिं सुनावौं ।
जग भावै सो करहि जाइ कै, मैं मन अनत न धावौं ॥२॥
कासी प्राग द्वारिका मथुरा, कहँ कहँ चित दौरावौं ।
जगन्नाथ मैं जानौं एकै, सो अंतर लै लावौं ॥३॥
तीनिउ चारिउ लोक पसारा, अनत कहाँ ठहरावौं ।
जगजीवन अंतर महँ साँईं, चरन नाहिं बिसरावौं ॥४॥

॥ शब्द ७४ ॥

प्रभु को हृदय खोज करु भाई ।
भटका भटका काह फिरतु है, फिरि फिरि भटका खाई ॥१॥
दुनियाँ भटकी काह फिरतु है, भेद दीन्ह बतलाई ।
घटही में है गंग द्वारिका, घटहीं देखु समाई ॥२॥

---

* परदेसी ।

तन करु मेटुकी मन की मथानी, यहि बिधि मही* मथाई।
सत्त नाम सुधा अरतावहु, घिरत लेहु बहिराई ॥३॥
घिरत सत्त नाम की बासा, एहि बिधि जुक्ति बताई।
जगजीवन मत इहै कहत है, सहज नाम मिलि जाई ॥४॥

॥ शब्द ७५ ॥

साधो कौन कथै का ज्ञान।
जेहि का वारा पार नहीं है, को करि सकै बखान ॥१॥
चाँद सुरज गन पवनहिँ पानी, धरती किया असमान।
लियो बनाय पल माँ वो साँई, केहु घट नहिँ बिलगान ॥२॥
सेस सहस जिभ्या मन सुमिरत, संकर लाये ध्यान।
ब्रह्मा बिस्नु बसत मन तेहि माँ, सो निरगुन निर्बान ॥३॥
माया का बिस्तार अहै सब, बूझै कौन हेवान।
देखत खेलत नाचत अपुहिँ, आपुहिँ करत बखान ॥४॥
मैं अजान केतान काहि माँ, जनवाये तें जान।
जगजीवन सत नाम गहे मन, गुरु चरनन लपटान ॥५॥

॥ शब्द ७६ ॥

सत्तनाम भजि गुप्तहिँ रहै। भेद न आपन परगट कहै ॥१॥
परगट कहे सुखित नहिँ होई। सत मत ज्ञान जात सब खोई२
गर्ब गुमान त्यागि ममताई। ह्वै सीतल करि रहि दिनताई ॥३॥
पाँच पचीस एक अरुझाई। ताहि मिलत कछु बिलँब न लाई ४
जगजीवन अस कहि गोहराई। गुप्त कि बात करि प्रगट बताई५

॥ शब्द ७७ ॥

यह मन चरन वारि डारौं।
रह्यो लगाय आय सरनागति, इत उत सबै बिसारौं ॥१॥

---

*मट्ठा।

रह्यो अचेत सुद्धि नहिं आई, टूटै डोरि सँभारौ ।
डोरी पोढ़ि बिलग ना होई, तहँ सत मूरि बिचारौ ॥२॥
रहि ठहराय किये दृढ़ आसन, निरखि कै रूप निहारौ ।
जगजीवन के समरथ साहेब, तुमहीं पार उतारौ ॥३॥

॥ शब्द १८ ॥

साँई सूरति अजब तुम्हारी ।
जेहिं जस लागि तेई तस जानी, तिन तस गहा बिचारी ॥१॥
सो तस देखि मस्त मन ह्वैगा, कहि नहिं जात पुकारी ।
दियो सिखै सत मंत्र मते महँ, बिसरत नहिं अनुहारी ॥२॥
गन ससि भानु रूप तेहिं वारौं, ते नहिं चरन बिसारी ।
ब्रह्मा सेस बिस्नु मन सुमिरत, संकर लाये तारी ॥३॥
जाहि भक्त पर किरपा कीन्ह्यो, कर लीन्ह्यो जग न्यारी ।
जगजीवन माया है परबल, भवजल पार उतारी ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

प्रभु जो नाहिं कछु कहि जाइ ।
जहँ तहाँ परपंच बहूतै, नाहिं कोइ सकुचाइ ॥१॥
धर्म दाया त्यागि दीन्ह्यो करहि बहु कुटिलाइ ।
चेत नहिं कोउ करत मन तें, गयो सब गफिलाइ ॥२॥
जहाँ तहाँ बिबाद ठानहिं, भिड़हिं बृष की नाँइ* ।
कहा कछु दिन सुःख भुगुतैं, अंतहूँ दुख पाइ ॥३॥
जहाँ सुमिरन क्रत कोई, बैठि तहवाँ आइ ।
देत ध्यान बिगारि छिन महँ, अवरि बात चलाइ ॥४॥

*साँड़ की तरह लड़ते हैं ।

देखि सुनि मोहिं परत ऐसे, कलि कि प्रभुता आइ ।
करै जो जस जाइ भुगुतै, कोइ न कहुँ गति पाइ ॥५॥
पार उतरहि उबरि बिरला, सुमति जेहिं मन आइ ।
जगजीवन बिस्वास करि रहु, सुरति चरनन लाइ ॥६॥

॥ शब्द ८० ॥

राम नाम बिना कहौ कैसे को तरिहै ॥ टेक ॥
कठिन भरम सागर परि, जग्त का उबरिहै ।
आवत है मोहिं अँदेस, कठिन है बिदेस, काह करिहै ॥१॥
लागहिं नहिं कोउ साथ, आइहि नहिं कोउ काम,
जम की फाँसि परिहै ।
खाइ लेहै जमदूत कोऊ, खोज काहु नाहिं पैहै ॥२॥
सत सुकिर्त नाम भजु, संकट बिकट तें बचिहै ।
जगजिवन प्रकास जोति, निर्मल गुरु चरन सरन रहिहै ॥४॥

॥ शब्द ८१ ॥

साधो भजहु नाम मन लाई ।
दुइ अच्छर रसना रट लावहु, कबहूँ मन तें नहिं बिसराई ॥१॥
मन मैं फूलि भूलि धन माया, अंत चले पछिताई ।
काया कोट अंतर रहु थिर ह्वै, बाहर चित्त कबहुँ नहिं जाई ॥२॥
यहि रहि जुक्ति जक्त करि बासा, सर्ब बिकार दूर ह्वै जाई ।
जगजीवन जो चरन गहा जिन, ताहिं काल तें लेहिं बचाई ॥१॥

॥ शब्द ८२ ॥

जग की रीति कही नहिं जाई ॥ टेक ॥
मिलहिं भाव करि कै अधीन ह्वै, पाछे करि कुटिलाई ।
माला कंठी पहिरि सुमिरनी, दीन्ह्यो तिलक बनाई ॥१॥

करहिं बिबाद बहुत हठ करि कै, परहिं भरम माँ जाई ।
कहहिं कि भक्त सिद्ध हैं निर्पटिन्ह,* बहु बकबाद बढ़ाई ॥२॥
अंतर नाम भजन तेहिं नाहीं, जहँ तहँ पूजा लाई ।
जगजिवनदास गुप्र मति सुमिरहु, प्रगट न देहु जनाई ॥३॥

॥ शब्द ८३ ॥

नाम मंत्र तत्त सार लीजै भजि सोई ॥ टेक ॥
करि कै परतीत नित्त बिलग नाहिं होई ।
डोरि पोढ़ि लागि रहै तूरै† नहिं कोई ॥१॥
लियो बिचारि बेद चारि मथि कै मन सोई ।
पोथी औ पुरान ज्ञान कहत बेद जोई ॥२॥
होवै निर्बान कर्म भर्म मैल धोई ।
अजपा जप लागि रहै निरमल तब होई ॥३॥
ऐसो जुक्ति जक्त रहै दुबिधा कहँ खोई ।
जगजीवन भेंटु गुरू सत्त, बिलग नाहिं होई ॥४॥

॥ शब्द ८४ ॥

साधो जग बिरथा बातैं करही ।
साध तें मिलहिं कपट मन कीन्हे, बातैं औरै करहीं ॥१॥
पकरैं पाँव भाव करि बहु बिधि, पाछे निंदा करहीं ।
भयो पाप कर्म कहँ प्रापति, घोर नरक माँ परहीं ॥२॥
साँचा नाम कहहि ते झूँठा, भरम भुलाने फिरहीं ।
अस हम परखि नैन तें देखा, सुभ कारज नहिं सरहीं ॥३॥
इत उत की बातैं कहि भाखहिं, सुधि नाहीं घट धरहीं ।
जगजीवन रहु चरन ध्यान धरि, जिहिं हित सो तस चहहीं ४

* निर्बंत्त होगये । † तोड़े ।

॥ शब्द ८५ ॥

डोरि पोढ़ि लाय चित्त अंतै नहिं जाई ।
पाँच औ पचीस साथ, देत हैं भ्रमाई ॥१॥
ऐसी जुक्ति करहु एक, एक हीं चलाई ।
मन मतंग मारि दे तैं, तोरि दे मिताई ॥२॥
नीच होहु नीच जानि, ऊँचेहु चढ़ि धाई ।
सब कहँ लै बाँधि डारु, दुनियाँ बिसराई ॥३॥
सतगुरु सरूप रूप, निरखहु निरथाई ।
जगजीवन पास बास, थिर रहु ठहराई ॥४॥

॥ शब्द ८६ ॥

चरनन पै मैं वारी तुम्हारी ।
भ्रमत फिर्यों कछु जानत नाहीं, ज्ञान तें कछु न बिचारी ॥१॥
जो मैं कहौं कहा बसि मोरो, आहै हाथ तुम्हारी ।
सुन्यौं गरंथ संत कहि भाष्यो, अनगन लीन्ह्यो तारी ॥२॥
सुनि प्रतीत होत मन मोरे, जब भै कृपा तुम्हारी ।
जगजीवन कि अरज सुनि लीजै, तुम सब लेहु सँवारी ॥३॥

॥ शब्द ८७ ॥

तुम सौं यह मन लागा मोरा ।
करौं अरदास इतनी सुनि लीजै, तको तनक मोहिं कोरा ॥१॥
कहँ लगि औगुन कहौं आपना, कामी कुटिल औ
लोभी चोरा ।
तब के अब के बहु गुनाह भे, नाहिं अंत कछु छोरा ॥२॥
साँईं अब गुनाह सब मेटहु, चितै आपनी ओरा ।
जगजीवन कै इतनी बिनती, टूटै प्रीति न डोरा ॥३॥

॥ शब्द ८८ ॥

जा पर भयो राम दयाल ।
दरस दे कर्म मेटि डार्‌यौ, तुरत कान्ह निहाल ॥१॥
निर्बान केवल भयो अम्मर, गयो काटि भ्रम जाल ।
दुख दूरि दुबिधा सुःख दै, जन जानि करि प्रतिपाल ॥२॥
भक्त काँ जब कष्ट व्याप्यो, धाइ आयो हाल ।
दुष्ट केर बिनास कीन्ह्यो, त्रास मानो काल ॥३॥
ऐस आपन दास जानत, मातु के ज्यौं बाल ।
जगजीवन गुरु रूप अमृत, नयन पियहु रसाल ॥४॥

॥ शब्द ८९ ॥

साँईं अब सुन लीजै मोरी ।
तुम जानत घट कै सब की मति, तुम तें कहौं न चोरी ॥१॥
प्रीति लगाय राखिये निसु दिन, कबहुं न तोरहु डोरी ।
मोहिं अनाथ के नाथ अहौ तुम, किरपा करि कै हेरी ॥२॥
करि दुख दूरि देहु सुख जन कहँ, केतिक बात है थोरी ।
जब जब धाय दास पहँ आयो, जब सुनाय के टेरी ॥३॥
जन काजे जग आय देँह धरि, मार्‌यो दैत घनेरी ।
करि सुखि पलहिँ एक छिन माहीं, राम दोहाई फेरी ॥४॥
कहौं काह कहिबे की नाहीं, सीस चरन तर मेरी ।
जगजीवन के साँईं समरथ, अब किरपा करि हेरी ॥५॥

॥ शब्द ९० ॥

आनँद के सिंध में आन बसे, तिन को न रह्यो तन
को तपनो ।
जब आपु मैं आपु समाय गये, तब आपु मैं आपु
लह्यो अपनो ॥

जब आपु में आपु लह्यो अपुनो, तब अपनो ही जाप
रह्यो जपनो ।
जब ज्ञान को भान प्रकास भयो, जगजीवन होय
रह्यो सपनो ॥

॥ शब्द ९१ ॥

साहेब मोहिं गुन एकौ नाहीं ।
औगुन बहुत महा अघ लादे, तातें सूझत नाहीं ॥१॥
काया कोटि नर्क की आहै, बसत अहौं तेहि माहीं ।
तस्कर* संग भंग मति मोरी, रहत अहैाँ तेहि माहीं ॥२॥
झगरा करत रात दिन छिन छिन, कहत हैं रहु हम माहीं ।
मैं तो चहैाँ रहैाँ चरनहिं सँग, एइ राखत हैं नाहीं ॥३॥
करु दाया तब होहि छिमा एइ, सीतल रहैाँ छबि छाहीं ।
जगजीवन की बिनती इतनी, आदि अंत कै तुम्हरै आहीं ॥४॥

॥ शब्द ९२ ॥

सतगुरु मैं तो तुम्हार कहावौं ।
तुम काँ जानैाँ तुम काँ मानौं, अवर न मन लै आवौं ॥१॥
धन औ धाम काम तुमहीं तेँ, तुम काँ सीस नवावौं ।
तुमहीं तें निर्बाह हमारा, तुमहीं तँ सुख पावौं ॥२॥
जब बिसरावहु तब मोहिं बिसरन, चहैा तो सरनहिं आवौं ।
दाया करत जानि जन आपन, तब मैं ध्यान लगावौं ॥३॥
हाथ सर्बसौ अहै तुम्हारे, केतक मति मैं गावौं ।
जगजीवन काँ आस तुम्हारी, नैन दरस नित पावौं ॥४॥

---

*चोर ।

॥ शब्द ९३ ॥

अब मैं तुम सोँ सुरति लगाई ।
ओगुन क्रम भ्रम मेटि हमारे, राखि लेहु सरनाई ॥१॥
हौं अज्ञान अजान केति बुधि, सकौं नाहिं गति गाई ।
ब्रह्मा सेस महेस थकित भे, भेद न तिनहूँ पाई ॥२॥
सब बिस्तार पसार तुम्हारा, राख्यो है अरुझाई ।
केहु समुझाय बुझाय बतायो, काहुहि दियो बहाई ॥३॥
तुम दाता औ मुक्ता आहहु, तुम कहँ सीस चढ़ाई ।
जगजीवन को इतनी सुनिये, कबहुँ नाहिं बिसराई ॥४॥

॥ शब्द ९४ ॥

तुम्हरी गति कछु जानि न पायो ।
जेइ जस बूझा तेइ तस सूझा, ते तैसइ गुन गायो ॥१॥
करौं ढिठाई कहौं बिनय करि, मोहिं जस राह बतायो ।
जस मैं गहा लहा लै लागी, चरन सरन तब पायो ॥२॥
भटकत रहेउँ अनेक जनम लहि, वह सुधि सो बिसरायो ।
दाया कीन्ह दास करि जानेहु, बड़े भाग तें आयो ॥३॥
दियो बताइ दिखाइ आपु कहँ, चरनन सीस नवायो ।
जगजीवन कहँ आपन जानेहु, अघ कर्म भर्म मिटायो ॥३॥

॥ शब्द ९५ ॥

अब सुनि लीजै बिनय हमारी ।
तुम प्रभु अहहु प्रान तें प्यारे, और न कोउ अधिकारी ॥१॥
केतेउ तारेहु केते उबारेहु, हम केतानि बिचारी ।
तनिक कोर ओर हम देखहु, होहूँ तुरत सुखारी ॥२॥
सेस सहस-फनि मन सुमिरत हैं, सिव सत सुरति सुधारी ।
सनक सनंदन करहिं बंदना, गावहिं बेदो चारी ॥३॥

जल थल पवन भानु ससि गन महँ, काहु तेँ जोति न न्यारी ।
जगजीवन एइ चरन कमल तेँ, सूरति कबहुँ न टारी ॥४॥

॥ शब्द ९६ ॥

साँईं अब सुनि लीजै मोरी ।
दाया करहु दास करि जानहु, करहु प्रीति दृढ़ डोरी ॥१॥
तुम्हरे हाथ नाथ सबही की, जानत सो मति मोरी ।
जेहि करि चहहु नचावहु तेहि करि, नहिँ केहु की बरजोरी ॥२॥
ठग बटमार साह हौ तुमहीँ, तुमहिँ करावत चोरी ।
दाता दान पुन्न हौ तुमहीँ, विद्या ज्ञान घनेरी ॥३॥
सब महँ नाचत सबहिँ नचावत, करौ कुसब्द निबेरी ।
जगजीवन काँ किरपा करहू, निरखत रहै छबि तेरी ॥४॥

॥ शब्द ९७ ॥

साँईं तेरा करै कौन बखान ॥ टेक ॥
ज्ञान भेद बेद तुमहीँ, और कवन केतान ।
बिस्नु तुव दरबार ठाढ़े, अज्ञा मन परमान ॥१॥
चहत आहौ होत सोई, अवर होत न आन ।
सेस सुमिरहि सहस मुख तेँ, धरे संकर ध्यान ॥२॥
कर्म गति जो लिखि बिधातै, तिनहुँ नहिँ गति जान ।
जगजिवन रबि ससि नेग* वारौँ, नाहिँ छबिहिँ समान॥३॥

॥ शब्द ९८ ॥

साधो जेहिँ आपन कै लीन्हा ।
ओगुन कर्म मिटायौ छिन महँ, भक्ति भेद तेहिँ दीन्हा ॥१॥

*अनेक ।

भजत सोई बिसरावत नाहीं, रहत चरन तें लीना ।
आहै अलष लष्यो तब आयो, निर्गुन मूरति चीन्हा ॥२॥
बैठि रहा मन भा सुखवासी, अनत पयान न कीन्हा ।
अम्मर भयो मरहि ते नाहीं, गुप्त मंत्र मत लीन्हा ॥३॥
सतगुरु मूरति निरखि निहारहि, जैसे जलहित मीना ।
जगजीवन चकोर ससि देखत, पाय भाग तें तीन्हा ॥४॥

॥ शब्द ९९ ॥

साँईं बिनती सुनु मोरी । चरनन तें छुटै न डोरी ॥१॥
मैं अहौं चरन को दासा । मोहिं राखहु अपने पासा ॥२॥
मैं आहौं दासन दासा । मोहिं सदा तुम्हारी आसा ॥३॥
किरपा जब भई तुम्हारी । तब आपनि सुरति सँभारी ॥४॥
तुम तजि अवर न जानौं । किरपा तें नाम बखानौं ॥५॥
तब मैं कह्यौं पुकारी । किरपा जब भई तुम्हारी ॥६॥
सब तीरथ तुमहीं कीन्हा । हम साहेब तुम कहँ चीन्हा ॥७॥
रहौं सोवत जागत लागी । सो देहु इहै बर माँगी ॥८॥
मन अनत कतहुँ नहिं धावै । चरनन तें सदा लव लावै ॥९॥
जगजिवन चरन लपटाना । तुम मोहिं सिखायो ज्ञाना ॥१०॥

॥ शब्द १०० ॥

मन तुम भजौ रामै राम ।
तार दीन्हो बहुत पतितन, उत्तमं अस नाम ॥१॥
गह्यो जिन परतीत करिके, भयो तिन को काम ।
मिटे दुख संताप तिन के, भयो सुख आराम ॥२॥
देखि सुख पर भूल ना तैं, दौलतं धन धाम ।
अहै सब यह झूठ आसा, नाहिं आवे काम ॥३॥

चढ़ौ ऊँचे नीच होइ के, गगन है भल ग्राम ।
जगजिवनदास निहार मूरति, चरन कर बिस्राम ॥४॥

दोहा

राम राम रट लागि जेहि, आय मिले तेहि राम ।
जगजीवन तिन जनन के, सफल भये सब काम ॥

शिष्यों के नाम पत्र ।

(१)

साधो सीतल यह मन करहु । अंतर भीतर साधे रहहु ॥१॥
जुक्ति इहै दुइ अच्छर करहु । सतगुरु भेँट कीन्ह जो चहहु ॥२॥
क्रोध तमा* यह देहु बिसारि । राखहु अंतर डोरि सँभारि ॥३॥
तमा तुनुक† तेँ जोति बुझाय । कैसेहु भट होय नहिँ जाय ॥४॥
नैन नीर बाहर नहिँ आवै । बाहर आवै तो दरस न पावै ॥५॥
सदा सुचित्त चित्त यह रहई । अंतर बाहर कबहुँ न बहई ॥६॥
देबीदास देउँ उपदेस । त्यागहु मन तेँ सबै अँदेस ॥७॥
जगजीवन धरि अंतर ध्यान । सीतल रहि कर भाषौ ज्ञान ॥८॥

(२)

भक्त देवीदास । मन राखहु चरन की आस ॥१॥
वै करहिँ सब ग्रौसान । तुम करत रहु दृढ़ ध्यान ॥२॥
मन नाहिँ व्याकुल होहु । करि रहहु चरन सनेहु ॥३॥

---

*लोभ । † जल्द भड़क उठना ।

(३)

भक्त दूलमदास । रहु सदा नाम की आस ॥१॥
मन रहहु अंतर लाय । मत सब्द कहौं सुनाय ॥२॥
गगन करु मंडान । जहँ आहिं ससि गन भान ॥३॥
तहँ अलख लखि पहिचान । सतगुरु छबि निरबान ॥४॥
जगजिवन कहै बिचारि । गहि रहहु नाम सँभारि ॥५॥

(४)

भक्त देबीदास । मन सदा चरन की आस ॥१॥
मन ज्ञान ध्यान अनंद । कटि जाहिंगे भ्रम फंद ॥२॥
सदा सुख बिसराम । चित भजत रहिये नाम ॥३॥
जगजीवन कहत है सोय । चित रहै चरन समोय ॥४॥

॥ दोहा ॥

सदा सहाई दास पर, मनहिं बिसारै नाहिं ।
जगजीवन साँची कहै, कबहूँ न्यारे नाहिं ॥५॥

(५)

भक्त देबीदास । मन नाम बसि बिस्वास ॥१॥
मन करै गगन मुकाम । सत दरस तें सिध काम ॥२॥
गुरु चरन तें रहु लाग । तहँ भक्ति बर ले माँग ॥३॥
निरखि ह्वै मतवार । मिटि जाय सब भ्रम जार ॥४॥
अमर जुग जुग होहु । रहु मगन करु न बिछोहु* ॥५॥

॥ दोहा ॥

सत समरथ तें राखि मन, करिय जगत को काम ।
जगजीवन यह मंत्र है, सदा सुःख बिसराम ॥६॥

---

* बियोग, जुदाई ।

साखी

मैं तैं गाफिल होहु नहिं, समुझि कै सुद्धि सँभार ।
जौने घर तें आयहू, तहँ का करहु बिचार ॥१॥
काहे भूल गइसि तैं, का तोहि कहँ हित लाग ।
जवने पठवा कौल करि, तेहि कस दीन्ह्यो त्याग ॥२॥
भूलु फूलु सुख पर नहीं, अब हूँ होहु सचेत ।
साँईं पठवा तोहि काँ, लावो तेहि तें हेत ॥३॥
इहाँ तो कोऊ रहि नहीं, जो जो धरिहै देँह ।
अंत काल दुख पाइहौ, नाम तें करहु सनेह ॥४॥
तजु आसा सब झूँठ ही, सँग साथी नहिं कोय ।
केउ केहू न उबारिही, जेहि पर होय सो होय ॥५॥
मारहिं काटहिं बाटहीं, जानि मानि करु त्रास ।
छाँड़ि देहु गफिलाई, गहहु नाम की आस ॥६॥
जगजीवन गुरु सरनहीं, अंतर धरि रहु ध्यान ।
अजपा जपु परतीत करि, करिहैं सब औसान ॥७॥
सत्त नाम जप जीयरा, और बृथा करि जान ।
माया तकि नहिं भूलसी, समुझि पाछिला ज्ञान ॥८॥
कहँवाँ तैं चलि आयहू, कहाँ रहा अस्थान ।
सो सुधि बिसरि गई तोहिं, अब कस भयसि हेवान ॥९॥
अबहूँ समुझि के देखु तैं, तजु हंकार गुमान ।
यहि परिहरि* सब जाइ है, होइ अंत नुकसान ॥१०॥

---

*छोड़कर ।

दीन लीन रहु निसु दिना, और सर्बसैा त्यागु ।
अंतर बासा किये रहु, महा हितु प्रीति तें लागु ॥११॥
काया नगर सोहावना, सुख तब हीं पै होय ।
रमत रहै तेहिँ भीतरे, दुख नहिँ ब्यापै कोय ॥१२॥
दिना चारि का पेखना, अंत रहहि कोउ नाहिँ ।
जानु बृथा मन आपने, कोउ काहू कर नाहिँ ॥१३॥
मृत मंडल कोउ थिर नहीं, आवा सो चलि जाय ।
गाफिल ह्वै फंदा पस्त्रो, जहँ तहँ गयो बिलाय ॥१४॥
जिन केहु सुरति सँभारिया, अजपा जपि भे संत ।
न्यारे भवजल सबहिँ तेँ, सत्त सुकृति तें तंत ॥१५॥
जगजीवन गहि चरन गुरु, ऐनन* निरखि निहारि ।
ऐसी जुगुती रहै जे, लेहैँ ताहि उबारि ॥१६॥

*आँख से